विस्तृत प्रश्नावली

The Larger Catechism

प्रश्न 1 : मनुष्य जीवन का मुख्य और सबसे बड़ा उद्देश्य क्या है?

उत्तर : मनुष्य जीवन का मुख्य और सबसे बड़ा उद्देश्य है, कि वह परमेश्वर की महिमा करे और पूर्णता हमेशा उसमें आनन्द मनाए।

प्रश्न 2 : कैसे पता चलता है कि परमेश्वर है ?

उत्तर : मनुष्य में प्रकृति का प्रकाश/ज्ञान, और परमेश्वर के कार्य साफ रीति से बताते है कि परमेंश्वर है, परन्तु उसका वचन और आत्मा मनुष्यों के उद्धार के लिए, परमेश्वर को पूर्णता और प्रभावी ढ़ग से प्रगट करते है।

प्रश्न–3 : परमेश्वर का वचन क्या है?

उत्तर : पुराने और नये नियम का पवित्र शास्त्र परमेश्वर के वचन है, जो आज्ञाकारिता और विश्वास का एकमात्र नियम है।

प्रश्न–4 : यह कैसे पता चलता है कि पवित्र शास्त्र परमेश्वर के वचन हैं?

उत्तर : अपने गौरव और पवित्रता से, पवित्र शास्त्र स्वंय प्रगट करते है कि वे परमेश्वर के वचन हैं। पवित्र शास्त्र के सभी हिस्सों की सहमति, ओर पूर्णता का आशय, उद्देश्य जिससे पूर्ण महिमा परमेश्वर की है, उनकी पापी को दोषी ठहराने और उन्हें बदलने की सामर्थ, विश्वासियों को तसल्ली और उन्हें उद्धार में मजबूती देने की सामर्थ से पता चलता है, कि ये परमेश्वर के वचन है। परन्तु पवित्र शास्त्र से और इसके द्वारा, परमेश्वर का आत्मा मनुष्य के हृदय में गवाही देता है, और पूर्णता आश्वस्त करता है कि पवित्र शास्त्र पूर्णता परमेश्वर का वचन हैं।

प्रश्न 5 : पवित्र शास्त्र मुख्यत: क्या सिखाता है?

उत्तर : पवित्र शास्त्र मुख्यत: सिखाता है, कि मनुष्य को परमेश्वर बारे में क्या विश्वास करना है, और परमेश्वर मनुष्य से क्या चाहता है।

मनुष्य को परमेश्वर के बारे में क्या विश्वास करना चाहिए

प्रश्न 6 : पवित्र शास्त्र परमेश्वर के बारे में क्या प्रगट करता है?

उत्तर : पवित्र शास्त्र परमेश्वर के बारे में, कि परमेश्वर क्या है, परमेश्वर में व्यक्ति,

उसके संकल्प/निणर्य और उसके निर्णयों का सम्पादन, को प्रगट करता है।

प्रश्न 7 : परमेश्वर क्या है?

उत्तर : परमेश्वर आत्मा है, अपने में और अपने आप के अस्तित्व, महिमा, आशीषों और सिद्धान्तों में असीमित, अपरम्पार है। सम्पूर्ण, अनन्त, अपरिवर्तनीय, समझ से परे, सब जगह उपस्थित, सर्वसामर्थी, सब बातों का जानने वाला, बुद्धिमानी, अति पवित्र, पूर्ण न्यायी, अति करूणामयी ओर अनुग्रकारी, अत्यन्त धैर्यवान और भलाई और सत्यता में अपार है।

प्रश्न 8 : क्या एक के अतिरिक्त और कई परमेश्वर है?

उत्तर : नहीं ! केवल एक ही एकमात्र, जीवित और सच्चा परमेश्वर है।

प्रश्न 9 : परमेश्वरत्व में कितने व्यक्ति हैं?

उत्तर : परमेश्वरत्व में तीन व्यक्ति हैं, पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा,और ये तीनों, तत्वों में समान, सामर्थ और महिमा में समान, एक सच्चा अनन्तकालीन परमेश्वर है। यद्यपि अपने व्यक्तिगत गुणों में भिन्न है।

प्रश्न 10 : परमेश्वरत्व में तीनों व्यक्ति के व्यक्तिगत गुण क्या है?

उत्तर : पिता पुत्र को अग्रसर करता है और पुत्र पिता का इकलौता है और पवित्र आत्मा पिता और पुत्र से, अनन्तकाल से अग्रसर है।

प्रश्न 11 : यह कैसे पता चलता है, कि पुत्र और पवित्र आत्मा, पिता के साथ समानता में परमेश्वर है?

उत्तर : पवित्र शास्त्र उनको ऐसे नाम, गुण, कार्य और आराधना देकर जो सिर्फ परमेश्वर के लिए उपयुक्त है, प्रगट करता है, कि पुत्र और पवित्र आत्मा, पिता के साथ समानता में परमेश्वर है।

प्रश्न 12 : परमेश्वर के संकल्प/निर्णय क्या हैं?

उत्तर : परमेश्वर के निर्णय, उसकी भली इच्छा के, स्वतंत्र और पवित्र कार्य है, जिनके द्वारा उसने अनन्तकाल से, अपरिवर्तनीय रीति से जो कुछ घटित होता है, विशेषकर स्वर्गदूतों और मनुष्य के बारे में उसे अपनी महिमा के लिए पहले से ठहराया है।

प्रश्न 13 : परमेश्वर ने विशेषकर स्वर्गदूतों और मनुष्यों के लिए क्या निर्णय लिया है?

उत्तर : परमेश्वर ने अपने अनन्त और अपरिवर्तनीय निर्णय से, अपने प्रेम के कारण, अपने महिमामय अनुग्रह की स्तुति के लिए जो अपने समय पर प्रगट होता है,

उसने कुछ स्र्गदूतों को महिमा के लिए चुना, और मसीह में कुछ मनुष्य को अनन्त जीवन के लिए चुना, और अपनी प्रभुता की सामर्थ और अपनी स्वयं की इच्छा की सलाह/सम्मति अनुसार (जिससे वह किसी पर कृपा करता या नहीं करता, अपनी पसन्द के अनुसार) बचे हुओ को उनके पापों के कारण पहले से अनादर और क्रोध के लिए ठहराया, कि उसके न्याय के महिमा की स्तुति हो।

प्रश्न 14 : परमेश्वर कैसे अपने निर्णय को क्रियान्वित करता है?

उत्तर : परमेश्वर सृष्टि की रचना और इसकी देखभाल के कार्य में, अपने अडिग पूर्वाज्ञान के अनुसार और अपनी इच्छा की स्वतंत्र और अपरिवर्तनीय सलाह के द्वारा अपने निर्णय का सम्पादन करता है।

प्रश्न 15 : सृष्टि का कार्य क्या है?

उत्तर : सृष्टि का कार्य है, कि जिसमें परमेश्वर ने आदि में अपने वचन की सामर्थ से संसार और जो कुछ इसमें है, उसे बिना किसी (शून्य) से छः दिनों में, अपने लिए बनाया और सब बहुत अच्छा था।

प्रश्न 16 : परमेश्वर ने स्वर्गदूतों को कैसे बनाया ?

उत्तर : परमेश्वर ने सभी स्वर्गदूतों को अविनाशी, पवित्र, ज्ञान में उत्तम, अति सामर्थी बनाया, कि वे उसकी आज्ञा मानें और उसके नाम की स्तुति करें, फिर भी वे परिवर्तन के आधीन थे।

प्रश्न 17 : परमेश्वर ने मनुष्य की सृष्टि किस प्रकार की?

उत्तर : परमेश्वर ने सभी प्राणियों को बनाने के पश्चात, मनुष्य को पुरुष और स्त्री के रूप में बनाया, उसने मनुष्य को पृथ्वी की मिट्टी और स्त्री को मनुष्य की पसली से बनाया, उसने उन्हें जीवित, अविनाशी तार्किक आत्मा प्रदान की, ज्ञान, धार्मिकता और पवित्रता में उसने उन्हें अपने स्वरूप में सृजा, परमेश्वर की व्यवस्था उनके हृद पर लिखी थी, उनमें व्यवस्था को पूरा करने, और सृष्टि पर प्रभुता करने की सामर्थ थी, यद्यपि वे इसे तोड़ सकते थे।

प्रश्न 18 : परमेश्वर की कृपादृष्टि के कार्य क्या है?

उत्तर परमेश्वर की कृपा दृष्टि (व्यवस्था) है, कि वह अति पवित्रता, बुद्धि और सामर्थ से सभी प्राणियों को सुरक्षित रखते हुए, उनके सभी कार्यो पर अपनी महिमा के लिए प्रभुता करता है।

प्रश्न-19 : स्वर्गदूतो के लिये परमेश्वर की कृपा दृष्टि (व्यवस्था) क्या है?

उत्तर परमेश्वर ने अपनी व्यवस्था में कुछ स्वर्गदूतों को, पाप और नरक यातना में पड़ने दिया, और अपनी महिमा के लिये, उन्हें और उनकें पाप को निधार्रित किया, और बाकी स्वर्गदूतों को पवित्रता और आनन्द में ठहराया, और उन्हे अपनी महिमा के लिए, अपनी सामर्थ, दया और न्याय के प्रबन्ध के लिये नियुक्त किया।

प्रश्न-20 : परमेश्वर की व्यवस्था (कृपा दृष्टि) मनुष्य के लिये क्या थी, उस स्थिति में जिसमें उन्हें बनाया गया था?

उत्तर जिस स्थिति में मनुष्य को बनाया गया, परमेश्वर ने उसे स्वर्ग (एदेन की वाटिका) में रखा, और इसकी देखभाल के लिये नियुक्त किया, और सब प्राणियों पर उसे अधिकार दिया, उसकी मदद के लिये विवाह ठहराया, और अपने साथ संगति प्रदान की, और उसके लिए विश्राम दिन भी ठहराया, और व्यक्तिगत, परिपूर्ण और निरंतर आज्ञाकारिता की शर्त पर, अपने साथ जीवन की वाचा का वायदा किया, जिसका प्रमाण जीवन का वृक्ष था, और भले, बुरे के ज्ञान के वृक्ष से खाने को मना किया, जिसका दण्ड मृत्यु को ठहराया।

प्रश्न-21 : जहाँ परमेश्वर ने उनकी रचना की और रखा क्या मनुष्य वहाँ बना रहा?

उत्तर हमारे पहले माता-पिता जिन्हें स्वतन्त्र इच्छा दी गई, शैतान की परीक्षा में पड़कर, परमेश्वर की आज्ञा तोड़ कर, मना किये हुए वृक्ष का फल खाया, परिणाम स्वरूप पवित्रता की स्थिति से दूर हो गये। जिसमें उनकी सृष्टि हुयी थी।

प्रश्न 22 : क्या सभी मनुष्य पहले पाप (आज्ञा तोड़ने) में सम्मिलित हैं?

उत्तर : परमेश्वर ने वाचा, आदम के साथ स्थापित की, यह वाचा सिर्फ आदम, अपने आप के लिए ही नहीं, वरन उसके पूरे वंशज और उसकी आने वाली पूरी पीढ़ी के लिये थी, इसलिए आदम में सभी ने पाप किया और आज्ञा तोड़कर उसके पाप में सम्मिलित हुए।

प्रश्न 23 : पाप (पतन) मनुष्य को किस अवस्था में ले आया?

उत्तर- पतन मनुष्य को पाप और दुःख की अवस्था में ले आया।

प्रश्न 24 : पाप क्या है?

उत्तर : पाप परमेश्वर की आज्ञा (व्यवस्था) को तोड़ना अथवा न मानना है, जिसे परमेश्वर ने मनुष्य को एक नियम (आज्ञा) के स्वरूप दिया।

प्रश्न 25 : मनुष्य पतन से जिस पाप की अवस्था में गया वह क्या है?

उत्तर : पाप की अवस्था, जिसमें मनुष्य पतित हुआ, आदम के पहले पाप का दोष है। धार्मिकता जिसमे वह सृजा गया, अपने भ्रष्ट स्वभाव से वह इससे दूर और अयोग्य हो गया। और आत्मिक अच्छाई की अवस्था के विपरीत होकर पूर्णता भ्रष्टता की ओर झुक गया, जिसे साधारणयत: मौलिक पाप कहा जाता है, जिससे सारे वास्तविक पाप अग्रसर होते हैं।

प्रश्न 26 : किस प्रकार मौलिक (असली) पाप हमारे पहले आदि माता-पिता से उनके वंशज में पहुँचता है ?

उत्तर : मौलिक पाप स्वभाविक पीढ़ी के द्वारा, हमारे आदी माता पिता से उनके वंशजों में पहुँचता है। इस प्रकार उनसे जो भी पीढ़ी आगे बढ़ती है। पाप में पैदा होती है।

प्रश्न 27 : पतन मनुष्य के जीवन में कौन से दु:ख लेकर आया?

उत्तर : पतन (पाप) की वजह से मनुष्य की, परमेश्वर के साथ संगति समाप्त हो गयी, ओर परमेश्वर का श्राप और क्रोध मनुष्य पर आ गया। इसलिए हम (मनुष्य) स्वभाव से क्रोध की सन्तान, शैतान के गुलाम है। और इस संसार और आने वाले समय में दण्ड के हकदार है।

प्रश्न 28 : इस संसार में पाप के दण्ड क्या है?

उत्तर : इस संसार में पाप का आन्तरिक दण्ड है, मस्तिष्क का अन्धापन, भ्रष्ट चेतना, बहकाव, हृदय की कठोरता, चेतना में भयानकता और बुरी चाहत है। और बाहरी दण्ड है, परमेश्वर का श्राप हमारी वजह से प्राणियों पर और हर एक बुराई जो हमारे शरीरों, नामों, स्थिति, सम्बन्ध कार्यों पर आती है। अन्तत: मृत्यु।

प्रश्न 29 : आने वाले युग में पाप का दण्ड क्या है?

उत्तर : आने वाले युग में पाप का दण्ड है। परमेश्वर की आनन्दमयी उपस्थिति से अनन्तकाल के लिये अलग होना, और आत्मा और शरीर की नरकीय आग में हमेशा के लिये अति दु:खदायी यातना।

प्रश्न 30 : क्या परमेश्वर ने सभी मनुष्य को पाप की स्थिति में नाश होने के लिये छोड़ दिया है?

उत्तर : परमेश्वर में मनुष्य को पाप और दु:ख की स्थिति में, जिसमें वे पहली वाचा जिसे कार्य की वाचा कहा जाता है, तोड़ कर पतित हुए, नाश होने के लिये छोड़ा नहीं, परन्तु सिर्फ अपने प्रेम और दया के वशीभूत चुने हुओं को इसमें से छुड़ाकर, दूसरी वाचा जिसे अनुग्रह की वाचा कहा जाता है के द्वारा उद्धार की स्थिति में लाता है।

प्रश्न 31 : अनुग्रह की वाचा किसके साथ (बनायी) थी।

उत्तर : अनुग्रह की वाचा, दूसरे आदम मसीह के साथ बनायी थी। और उसमें सभी चुने हुओं के साथ।

प्रश्न 32 : दूसरी वाचा में परमेश्वर का अनुग्रह किस प्रकार प्रगट होता है?

उत्तर : परमेश्वर का अनुग्रह, दूसरी वाचा में इस प्रकार प्रगट होता हैं, कि उसने उपहार स्वरूप, पापियों को एक बिचवईया प्रदान किया, और उसमें जीवन और उद्धार का मार्ग खोला। उनमे विश्वास की चाहत की-सभी चुनों हुओं को पवित्र आत्मा प्रदान की कि वह उनमें विश्वास, और पूर्ण बचाने वाले अनुग्रह को पूरा करे, और उन्हें इस योग्य करे कि वे पवित्र आज्ञाकारिता के द्वारा विश्वास की सच्चाई, और परमेश्वर के प्रति धन्यवाद का प्रमाण प्रस्तुत करे, और जिस प्रकार उन्हें उद्धार के लिये नियुक्त किया गया है, प्रगट करे।

प्रश्न 33 : क्या अनुग्रह की वाचा का प्रबन्धन हमेशा एक ही प्रकार से ही हुआ?

उत्तर : अनुग्रह की वाचा का प्रबन्धन हमेशा एक सा नहीं था, इसका प्रबन्धन पुराने नियम के समय में नये नियम के समय से, अलग था।

प्रश्न 34 : पुराने नियम के समय में अनुग्रह की वाचा का प्रबन्धन किस प्रकार से किया गया?

उत्तर : पुराने नियम के समय, अनुग्रह की वाचा का प्रबन्धन वायदों, भविष्यवाणियाँ बलिदान, खतना, फसह का पर्व, और अन्य पर्व, जो सभी आने वाले मसीह का प्रतिबिम्ब थे, के द्वारा हुआ। उस समय ये चुने हुओं का मसीह पर विश्वास, जिसके द्वारा पूर्ण पापों से छुटकारा और अनन्त उद्धार मिलता है, के लिए पर्याप्त थी।

प्रश्न 35 : किस प्रकार से अनुग्रह की वाचा नये नियम में प्राप्त होती है?

उत्तर : नये नियम के समय में जब मसीह प्रगट हो गया, अनुग्रह की वाचा का प्रबन्धन-वचन के प्रचार और बपातिस्मे और प्रभु भोज के संस्कार के द्वारा

होता है। जिनमें अनुग्रह और उद्धार ज्यादा पूर्णता, प्रमाण और प्रभावी ढंग से सभी देशों के लिए प्रगट होता है।

प्रश्न 36 : अनुग्रह की वाचा का बिचवइया कौन है?

उत्तर अनुग्रह की वाचा का एक मात्र बिचवइया प्रभु यीशु मसीह है, जो परमेश्वर का अनन्तकालीन पुत्र, सभी बातों में एक पिता के बराबर है, समय के पूरा हाने पर मनुष्य बन गया और जो परमेश्वर और मनुष्य था और निरन्तर है, और हमेशा दो भिन्न स्वभाव और एक व्यक्ति है।

प्रश्न 37 : मसीह किस प्रकार परमेश्वर का बेटा होते हुए मनुष्य बन गया?

उत्तर : परमेश्वर का पुत्र, अपने आप शरीर और तार्किक आत्मा लेकर, पवित्र आत्मा से मरियम में गर्भधारण करके, उससे जन्म लिया, फिर भी पाप मुक्त था इस प्रकार मनुष्य बन गया।

प्रश्न 38 : यह क्यों जरूरी था कि बिचवइया परमेश्वर हो ?

उत्तर : यह जरूरी था बिचवईया परमेश्वर हो, ताकि वह परमेश्वर के असीमित क्रोध के आगे, और मृत्यु की सामर्थ के आगे, मनुष्य स्वभाव को स्थिर रख सके, और अपने दु:खों को, आज्ञाकारिता, विचवईये की प्रार्थना को मूल्य दे सकें, और प्रभावी बनायें, और परमेश्वर के न्याय को सन्तुष्ट करें, उसका पक्ष हासिल करें, विशेष लोगों को खरीदे, उन्हें अपनी आत्मा दे, उनके सभी दुश्मनों को नष्ट करें और उन्हें अनन्तकालीन उद्धार प्रदान करें।

प्रश्न 39 : यह क्यों जरूरी था कि बिचवइया एक मनुष्य हो?

उत्तर : यह जरूरी था कि बिचवइया एक मनुष्य हो, ताकि वह हमारे स्वभाव को प्राप्त करे, व्यवस्था को पूरा करे, दु:ख उठाए और हमारे स्वभाव में हमारे लिए प्रार्थना करें। हमारी कमजोरियों को जान सके, कि हम दततक पुत्र स्वीकार किये जाए, और हम तसल्ली प्राप्त करे, और बहादुरी से अनुग्रह के सिंहासन तक पहुँच सके।

प्रश्न 40 : यह जरूरी क्यों था कि बिचवइया एक ही व्यक्ति में परमेश्वर और मनुष्य दोनों हो?

उत्तर : यह जरूरी था कि बिचवइया, जो परमेश्वर और मनुष्य का समझौता कराने वाला है, स्वयं भी परमेश्वर और मनुष्य एक ही हो, ताकि हर एक स्वभाव का कार्य हमारे लिए परमेश्वर को स्वीकार हो। और हम समझ सके कि यह पूर्ण व्यक्ति का कार्य है।

प्रश्न 41 : हमारे बिचवइये को यीशु क्यों कहा गया?

उत्तर : हमारे बिचवइये को यीशु कहा गया, क्योंकि वह अपने लोगों का उनके पाप से उद्धार देता है।

प्रश्न 42 : हमारे बिचवइये को मसीह क्यों कहा गया?

उत्तर : हमारे बिचवइये को मसीह कहा गया, क्योंकि वह माप से बढ़कर पवित्र आत्मा द्वारा अभिषिक्त किया गया, अलग किया गया और पूरा अधिकार और योग्यता से परिपूर्ण हुआ, कि वह अपनी कलीसिया का भविष्यद्वक्ता याजक और राजा बन सके, अपनी अपमान (अवमानना) और महिमा दोनों स्थिति में।

प्रश्न 43 : मसीह किस प्रकार भविष्यद्वक्ता के कार्य का पूरा करते है?

उत्तर : मसीह भविष्यद्वक्ता के कार्यों का कार्यांवित करते हैं। वह अपनी आत्मा और वचन से, हर काल/युग में, प्रबधन के विभिन्न प्रकार को कलीसिया पर प्रगट करते है। कि परमेश्वर की सम्पूर्ण इच्छा, सभी बातों में, उनकी बढ़ोत्तरी और उद्धार के लिए प्रगट हो जाए।

प्रश्न 44 : मसीह किस प्रकार एक याजक के पद के कार्य को करते हैं?

उत्तर : मसीह याजक के कार्य को, अपने आपको, परमेश्वर के लिए दोषमुक्त बलिदान करके प्रस्तुत किया, कि वह उसके लोगों के पापों का प्रायश्चित करें और निरन्तर उनके लिए प्रार्थना करते हुए, पूरा करते हैं।

प्रश्न 45 : मसीह किस प्रकार से एक राजा के कार्य को कार्यान्वित करते हैं?

उत्तर : मसीह, संसार में से अपने लिए लोगों को बुलाते है और उन्हें अधिकार, व्यवस्था, और उनकी निन्दा करते है, जिससे वह उनपर प्रभुता करते है, और अपने चुने हुओं पर उद्धार का अनुग्रह प्रदान करते हैं, उनकी आज्ञाकारिता का प्रतिफल देते है। और उनके पापों को सुधारते है। परीक्षा और दु:खों में उन्हें सुरक्षा और सहायता देते हैं। उनके शत्रु पर विजय दिलाते है। सभी बातों को अपनी महिमा के लिए करते है। और शेष जो परमेश्वर को नहीं जानते और सुसमाचार को नहीं मानते, उनसे बदला लेते है। इस प्रकार मसीह राजा के कार्य को पूरा करते है?

प्रश्न 46 : मसीह की अवमानना (अपमान) की अवस्था क्या थी?

उत्तर : मसीह के अपमान की अवस्था वह थी, जहाँ उसने हमारे लिए अपनी महिमा का त्याग कर, अपने आप एक दास का स्वरूप धारण किया,

गर्भधारण और जन्म, जीवन, मृत्यु और मृत्यु के पश्चात, पुनरुत्थान से पहले की अवस्था।

प्रश्न 47 : मसीह ने किस प्रकार अपने आपको गर्भावस्था और जन्म लेने में दीन किया?

उत्तर : मसीह ने, जो अनन्तकाल से परमेश्वर का पुत्र था, हमेशा परमेश्वर के सीने में था, अपने आपको गर्भावस्था और जन्म लेकर दीन किया, कि जब समय आया वह मनुष्य का पुत्र, स्त्री से बनाया गया और उससे जन्म लिया और विभिन्न परिस्थितियों में, साधारण से ज्यादा शर्मीन्दगी सही, इस प्रकार उसने अपने आपको दीन किया।

प्रश्न 48 : मसीह ने अपने जीवन में कैसे अपने आपको दीन (नीचे) किया ?

उत्तर : मसीह ने अपने आपको, व्यवस्था के आधीन किया, जिसे उसने पूर्णता पूरा किया और संसार के तिरस्कार, शैतान की परीक्षा, शरीर की कमज़ोरी जो मनुष्य के लिए स्वभाविक है, का विरोध सहा और सामना किया। विशेषकर गिरी हुए स्थिति में रहे। इस प्रकार उन्होंने (मसीह ने) जीवन में अपने आपको दीन किया।

प्रश्न 49 : मसीह ने अपनी मृत्यु में किस प्रकार अपने आपको दीन किया?

उत्तर : मसीह, यहूदा द्वारा पकड़वाया, अपने चेलो ने उसे छोड़ दिया, संसार ने उसकी हंसी उड़ाई और छोड़ दिया, पिलातुस ने उसे दोषी ठहराया, यातना देने वालों ने उसे दु:ख पहुँचाया, मृत्यु के खौफ से और अन्धकार की शक्तियों से संघर्ष किया, परमेश्वर के क्रोध को महसूस किया और सहा, अपने जीवन को पाप के लिये बलिदान कर दिया, और क्रूस की दर्दनाक, शर्म और श्रापित मृत्यु को प्राप्त किया। इस प्रकार उसनें मृत्यु में अपने आपको दीन किया।

प्रश्न 50 : मृत्यु के पश्चात मसीह की दीनता किन बातों में निहित है?

उत्तर : मृत्यु के बाद मसीह को दफनाया गया, और वह मृतकों की अवस्था में मृत्यु के अधीन रहा, जिसे कहा गया कि वह नरक में भेजा गया, इस प्रकार मृत्यु के पश्चात भी उसने अपने आपको दीन बनाए रखा।

प्रश्न 51 : मसीह की प्रतिष्ठा (महिमा) की अवस्था कौन सी थी?

उत्तर : मसीह की प्रतिष्ठा की अवस्था पुनरुत्थान, स्वर्ग पर उठाया जाना, पिता के दाहिने बैठना, और दोबारा संसार के न्याय के लिये आना है।

प्रश्न 52 : मसीह किस प्रकार पुनरुत्थान से प्रतिष्ठित (महिमा) किया गया?

उत्तर : मसीह ने पुनरुत्थान के द्वारा महिमा पायी, जिसमें वह मृत्यु में नाश नहीं हुआ, (जिसमें उसे रखा नहीं जा सकता था) जिस शरीर में उसने दु:ख उठाया उसी शरीर के साथ (परन्तु अब शरीर अविनाशी और जीवन की कमजोरियों से मुक्त था) आत्मा को जोड़ा, और अपनी सामर्थ से मृतकों में से तीसरे दिन जी उठा, अपने आपको पिता का पुत्र घोषित किया, पिता के न्याय को सन्तुष्ट किया, मृत्यु को अप्रभावी किया, और उसके पास इसकी सामर्थ थी, और वह जीवित और मृतकों का प्रभु बना, कलीसिया के प्रमुख के रूप में, जो कुछ उसने किया, कलीसिया को धर्मी ठहराने के लिये, अनुग्रह में जीवित किया, शत्रु के विरुद्ध मदद, और अन्तिम/न्याय के दिन उनके पुनरुत्थान का आश्वासन दिया, इस प्रकार अपने पुनरूत्थान से उसने अपनी महिमा की ।

प्रश्न 53 : अपने को ऊपर उठाए जाने में किस प्रकार मसीह को महिमा मिली ?

उत्तर : मसीह ने ऊपर उठाये जाने में अपनी महीमा प्रकट की, जिसमें पुनरुत्थान के बाद प्रेरितों को दिखाई देता रहा, और उनसे बातचीत की। उनसे परमेश्वर के राज्य के विषय में बातें की, और उन्हें आज्ञा दी कि सुसमाचार का प्रचार सभी राज्यों में करें। पुनरुत्थान के चालीस दिन पश्चात वह हमारे स्वभाव में और हमारा प्रतिनिधि बनकर, शत्रुओं पर विजयी होते हुए सबके सामने स्वर्ग पर चला गया। जहाँ वह मनुष्यों के लिए उपहार प्राप्त करता है और हमारी उम्मीदों को अन्त तक बनाए रखते हुए, हमारे लिए स्थान तैयार करता है, जहाँ वह है वहीं रहेगा, तब तक कि वह संसार के न्याय के लिए दोबारा नहीं आते।

प्रश्न 54 : परमेश्वर के दाहिने बैठने में किस प्रकार मसीह को महिमा मिली?

उत्तर : मसीह की, परमेश्वर के दाहिने बैठने में महिमा है, कि परमेश्वर मनुष्य के रूप में उसने परमेश्वर पिता का उच्चतम पक्ष, पूर्ण आनन्द, महिमा और स्वर्ग और पृथ्वी पर, सामर्थ को पाया। और कलीसिया को इकट्ठा और सुरक्षा प्रदान करता है और उसके शत्रुओं को बाँधता है, अपने सेवकों और लोगों को दान और अनुग्रह देता है, और उनके लिए प्रार्थना करता है।

प्रश्न 55 : मसीह कैसे हमारे लिये प्रार्थना करता है?

उत्तर : मसीह हमारे लिये इस प्रकार विनती करता है। वह हमारे स्वभाव में प्रगट होकर, निरन्तर स्वर्ग में पिता के सामने, अपनी आज्ञाकारिता और बलिदान

की योग्यता से, अपनी इच्छा को घोषित करते हुए, जो सभी विश्वासियों पर लागू होती है। उनके विरूद्ध सभी दोष का प्रतिउत्तर देते हैं, और उनके लिए चेतना की शांति प्राप्त करते हैं कि वे रोज की नाकामी को दूर कर, साहस के साथ अनुग्रह के सिंहासन तक पहुँचे और उनकी सेवा और वे (विश्वासी) परमेश्वर को ग्रहण होते है।

प्रश्न 56 : किस प्रकार मसीह, उसके दोबारा संसार के न्याय के लिये आने में महिमा पाता है?

उत्तर : मसीह, जिसका अधर्मी मनुष्य के द्वारा अनुचित न्याय हुआ, और उसे दोषी ठहराया गया। वह अन्तिम दिन में बड़ी सामर्थ, अपनी और अपने पिता की महिमा के प्रगटीकरण और अपने स्वर्गदूतों के साथ, एक बड़ी आवाज और स्वर्गदूतों की और परमेश्वर की तुरही की, आवाज के साथ धार्मिकता से संसार का न्याय करने आएगा, इस प्रकार वह दोबारा संसार के न्याय करने के लिए आने में महिमा पाता है।

प्रश्न 57 : मसीह अपनी बिचवइए के रूप में क्या फायदा प्राप्त करता है?

उत्तर : मसीह अपनी मध्यस्थता से, छुटकारा और अनुग्रह की वाचा के सभी फायदों को हमारे लिए प्राप्त करता है।

प्रश्न 58 : जो फायदे मसीह ने प्राप्त किये, हम उसमे कैसे सम्मिलित होते है?

उत्तर : हम मसीह के प्राप्त किये हुए फायदों में, उन्हे अपने ऊपर लागू करने से जो कि पवित्र आत्मा परमेश्वर का कार्य है, के द्वारा सम्मिलित होते हैं।

प्रश्न 59 : मसीह के द्वारा छुटकारे में कौन सम्मिलित होते हैं?

उत्तर : छुटकारा, निश्चय ही और प्रभावी रूप से उन्हें प्राप्त होता है, जिनके लिए मसीह ने इसकी कीमत चुकायी, जिन्हें उचित समय पर पवित्र आत्मा सुसमाचार के अनुसार, मसीह पर विश्वास करने योग्य बनाता है।

प्रश्न 60 : जिन्होनें सुसमाचार नहीं सुना, और यीशु मसीह को नहीं जानते, न ही उस पर विश्वास करते हैं, क्या वे यदि अपने जीवन को प्रकृति के प्रकाश में बिताते हैं, वे बचाए जाते हैं ?

उत्तर : वे जिन्होंने सुसमाचार नहीं सुना, यीशु मसीह को नहीं जाना, उस पर विश्वास नहीं किया, और प्रकृति के प्रकाश के अनुसार जीवन व्यतीत करते है। धर्म की व्यवस्था जिसका वे अंगीकार करते है, के अनुरूप जीवन जीते है। वे बचाए नहीं जाएगें। कहीं भी उद्धार नहीं है। सिर्फ एकमात्र मसीह ही उद्धारक है, जो कि सिर्फ अपने शरीर (कलीसिया) का उद्धारकर्त्ता है।

प्रश्न 61 : वे सभी जो सुसमाचार सुनते है और कलीसिया में है बचाए गये हैं।

उत्तर : वे सभी जो समाचार सुनते हैं, और दिखाई देने वाली कलीसिया में है, बचाये नहीं गये हैं। परन्तु वे जो अदृश्य कलीसिया के सच्चे सदस्य हैं।

प्रश्न 62 : दिखाई देने वाली कलीसिया क्या है?

उत्तर : सदृश्य कलीसिया एक समाज है, हर युग और संसार के हर एक हिस्से के लोगों से, जो सच्चा धर्म अंगीकार करते हैं और उनकी सन्तानों से बनता है।

प्रश्न 63 : सदृश्य कलीसिया के विशेष सौभाग्य क्या हैं ?

उत्तर : सदृश्य कलीसिया में सौभाग्य प्राप्त होता है, वहाँ परमेश्वर की सुरक्षा, शासन होता है, वहाँ रक्षा और सुरक्षा हमेशा की होती है, शत्रु के विरोध का सामना नहीं होता, और संतों की संगति का आनन्द, उद्धार के साधरण साधन और सुसमाचार की सेवा में मसीह द्वारा अनुग्रह, सबको प्रस्तुत किया जाता है, इस बात के साथ जो कोई उस पर विश्वास करेगा बचाया जाएगा, जो भी उसके पास आएगा किसी को निकाला न जाएगा।

प्रश्न 64 : अदृश्य कलीसिया क्या है?

उत्तर : अदृश्य कलीसिया सभी चुनो हुओं की पूर्ण संख्या है जो हो गये, हैं, और होंगे, मसीह (सर) की आधीनता में एकत्रित होंगे, अदृश्य कलीसिया हैं।

प्रश्न 65 : अदृश्य कालीसिया के सदस्य मसीह द्वारा कौन से लाभ का आनन्द पाते हैं?

उत्तर : अदृश्य कलीसिया के सदस्य मसीह से, उसके साथ एकता और संगति का आनन्द, अनुग्रह और महिमा में प्राप्त करते हैं।

प्रश्न 66 : वह एकता क्या है, जो चुने हुओं की मसीह के साथ है?

उत्तर : चुनो हुओं की एकता, मसीह के साथ परमेश्वर के अनुग्रह का कार्य है, जिसमें वे आत्मिक और विस्मयकारी, फिर भी वास्तविक और अलग न होने वाली रीति से, मसीह के साथ उनके, सर और पति के समान जोड़े जाते हैं, जो कि उनकी प्रभावी बुलाहट से होता है।

प्रश्न 67 : प्रभावी बुलाहट क्या है?

उत्तर : प्रभावी बुलाहट परमेश्वर की सामर्थ और अनुग्रह का कार्य है, जिसमें (उसके चुने हुओ के प्रति विशेष प्रेम से, इसलिए नहीं कि उनमें कुछ योग्यता है) ठहराए समय पर वह, उन्हें अपने वचन और आत्मा के द्वारा आमंत्रित करता और यीशु मसीह के पास लाता है, उनके मस्तिष्क को प्रकाशित करता,

उनकी इच्छा का नया और सामर्थ से दृढ़ करता है। (यद्यपि वे स्वयं पाप में भरे हैं) जिससे उनमें इच्छा होती है, और वे इस योग्य होते हैं, कि स्वतंत्रता से उसकी बुलाहट का उत्तर दें और अनुग्रह को स्वीकार कर अपना ले, जो उन्हें प्रस्तुत किया गया है।

प्रश्न 68 : क्या सिर्फ चुनों हुओ को प्रभावी बुलाहट दी जाती है?

उत्तर : सिर्फ सभी चुनो हुओ को ही प्रभावी बुलाहट दी जाती है। यद्यपि दूसरे भी बाहरी रूप से, वचन की सेवा के द्वारा बुलाए जाते हैं, उनमें भी आत्मा के कुछ सामान्य कार्य होते हैं, वे अपनी इच्छा से, जो अनुग्रह उन्हें प्रस्तुत होता है, उसे अनदेखा और बेकार कर देते हैं, और उचित रीति से, उनके अविश्वास में छोड़ दिये जाते हैं, वे कभी सच्चाई से यीशु मसीह के पास नहीं आते।

प्रश्न 69 : अनुग्रह में संगति क्या है, जो अदृश्य कलीसिया के सदस्य मसीह के साथ रखते हैं?

उत्तर : अनुग्रह में संगति जो अदृश्य कलीसिया के सदस्यों की मसीह के साथ है, कि वे मसीह की मध्यस्थता के गुणों में, उनके धर्मी ठहराए जाने में, दत्तक होने, पवित्रीकरण और अन्य कुछ भी जो इस जीवन में उनकी एकता मसीह के साथ प्रगट करती है, में शामिल होते हैं।

प्रश्न 70 : धर्मी ठहराया जाना क्या है?

उत्तर : धर्मी ठहराया जाना, पापियों के लिए परमेश्वर के मुफ्त अनुग्रह का कार्य है, जिसमें वह उन्हें धर्मी स्वीकार करता है, इसलिए नहीं कि उनमें कुछ भला है, या उन्होंने कुछ अच्छा किया है, वरन् यीशु की सिद्ध आज्ञाकारिता और पूर्ण संतुष्टी परमेश्वर उन्हें प्रदान करता है, जो सिर्फ विश्वास से प्राप्त होती है।

प्रश्न 71 : धर्मी ठहराया जाना किस प्रकार से परमेश्वर के मुफ्त अनुग्रह का कार्य है?

उत्तर : यद्यपि मसीह ने, अपनी आज्ञाकारिता और मृत्यु से, उनके हिस्से से जिन्हें धर्मी ठहराया गया है, परमेश्वर के न्याय को सही प्रकार से पूर्ण संतुष्ट किया है, फिर भी जिस प्रकार परमेश्वर ने इस संतुष्टि को स्वीकार किया, जिसे परमेश्वर ने उनसे मांगा होता, और इस निश्चयता के लिए अपने एकलौते पुत्र को दे दिया और उसकी धार्मिकता उन्हें दे दी और उनसे उनके धर्मी ठहराए जाने के लिए कुछ नहीं माँगा, सिवाए विश्वास के, जो अपने आप में उसका दान है। इस प्रकार उनका धर्मी ठहराया जाना, उनके लिए परमेश्वर का मुफ्त अनुग्रह है।

प्रश्न 72 : धर्मी ठहराने वाला विश्वास क्या है?

उत्तर : धर्मी ठहराने वाला विश्वास बचाने वाला अनुग्रह है, जो पापी के हृदय में परमेश्वर की आत्मा और वचन के द्वारा पैदा होता है, जिससे वह अपने पाप और दुःखों को मानता है, और अपनी और सभी दूसरे प्राणियों की अयोग्यता को मानता है, कि कुछ भी उसे वापस बचा नहीं सकते, और सिर्फ सुसमाचार के वायदे की सच्चाई पर भरोसा ही नहीं करता, वरन् मसीह और उसकी धार्मिकता स्वीकार करता और उस पर भरोसा करता है, जिससे वह पापों की क्षमा पाता है, और परमेश्वर की दृष्टि में उद्धार के लिये धर्मी ठहरता है।

प्रश्न 73 : किस प्रकार विश्वास, एक पापी को परमेश्वर के सामने धर्मी ठहराता है?

उत्तर : विश्वास एक पापी को परमेश्वर की दृष्टि में धर्मी बनाता है। इसलिए नहीं अन्य अनुग्रह हमेशा इसके साथ होते हैं, अथवा अच्छे कार्य जो इसका फल है, न ही इसलिए कि यह अनुग्रह का विश्वास है, अथवा कोई कार्य जो उसकी धार्मिकता के लिये उसे दिये गये, परंतु यह विश्वास एक माध्यम है, जिससे वह मसीह और उसकी धार्मिकता को स्वीकार करके अपने में पहन लेता है।

प्रश्न 74 : लेपालकपन क्या है?

उत्तर : लेपालकपन परमेश्वर के मुफ्त अनुग्रह का कार्य, उसके बेटे में और बेटे के लिये है। जिससे वे सभी जो धर्मी ठहराये जाते हैं, उसके संतानों में शामिल होते हैं, वे परमेश्वर का नाम पाते हैं, उन्हें पुत्र की आत्मा दी जाती है और उन्हें पिता की सुरक्षा में परमेश्वर के पुत्र की आजादी और सौभाग्य प्राप्त होते हैं, वे वायदे के वारिस और महिमा में मसीह के संगी वारिस बनते हैं।

प्रश्न 75 : पवित्रीकरण क्या है?

उत्तर : पवित्रीकरण परमेश्वर के अनुग्रह का कार्य है, जिससे उन्हें जिन्हें परमेश्वर ने जगत की उत्पत्ति से पहले पवित्र होने के लिए चुना है, समय पर आत्मा के सामर्थी कार्य के द्वारा, मसीह की मृत्यु और पुनरुत्थान को उनमें लागू करते हुए, उनके पूरे मनुष्यत्व को नया करके, परमेश्वर की समानता में कर देते हैं, और पश्चाताप से जीवन और अन्य बचाने वाले अनुग्रह उनके हृदय में डालते हैं, और ये अनुग्रह इस तरह से बढ़ता और मजबूत होता है, कि वे पाप के लिये मरते जाते हैं, और जीवन के नयेपन में आगे बढ़ते हैं।

प्रश्न 76 : जीवन के लिए पश्चाताप क्या है?

उत्तर : जीवन के लिए पश्चाताप बचाने वाला अनुग्रह है। जो पापी के हृदय में परमेश्वर की आत्मा और वचन के द्वारा पैदा होता है। जिससे वह सिर्फ इसकी

(पाप) भयानकता ही नहीं, वरन् अपने पाप की गन्दगी और दुर्गंध को समझता है, और परमेश्वर की मसीह में दया को समझते हुए, वह अपने पाप से ऐसा पश्चाताप करता है, कि वह इसके लिये दु:खी और पाप से घृणा करता है, और पाप से परमेश्वर की ओर मुड़ मुड़ता है, और धैर्य से, निरन्तर परमेश्वर के साथ नयी आज्ञाकारिता के मार्ग पर चलता है।

प्रश्न 77 : धर्मी ठहरने और पवित्रीकरण में क्या अंतर है?

उत्तर : यद्यपि पवित्रीकरण और धर्मी ठहरने को अलग नहीं किया जा सकता फिर भी उनमें अन्तर है, धर्मी ठहरने में परमेश्वर मसीह की धार्मिकता मनुष्य का पहनाता है, पवित्रीकरण में उसकी आत्मा अनुग्रह प्रदान करती है, और योग्य बनाती है कि इसका इस्तेमाल हो, पहले में पाप क्षमा किया जाता है। दूसरे में पाप को नियंत्रित किया जाता है। धर्मी ठहराये जाने में, सभी विश्वासियों को समानता में परमेश्वर के क्रोध से छुटकारा मिलता है, और पूर्णता इस जीवन में उन पर दोष नहीं लगाया जाता, पवित्रीकरण सभी विश्वासियों में एक समान नहीं होता, न ही किसी में पूर्ण सिद्ध होता है। वरन् सिद्धता की ओर अग्रसर होता है।

प्रश्न 78 : विश्वासियों के पवित्रीकरण में कहाँ अपूर्णता रह जाती है?

उत्तर : पवित्रीकरण की अपूर्णता विश्वासियों में, उन बचे हुए पापों की वजह से होती है, जो उनके जीवन में बचे रहते हैं, और शरीर की अभिलाषा निरंतर आत्मा के साथ संघर्ष करती है, जिससे वे कई बार परीक्षा में फँस कर पाप कर बैठते हैं, उनकी आत्मिक सेवा में बाधा पड़ती और उनके उत्तम कार्य अपूर्ण और परमेश्वर की दृष्टि में दोषपूर्ण ठहरते हैं।

प्रश्न 79 : क्या सच्चे विश्वासी अपनी अपूर्णता और कई परीक्षाएं और पाप जिसमें विश्वासी गिर जाते हैं, इससे वे अनुग्रह से वंचित हो जाते हैं?

उत्तर : सच्चे विश्वासी परमेश्वर के अपरिवर्तनीय प्रेम के कारण, और उसकी योजना और वाचा जो उन्हें सुरक्षित रखती है, उनकी मसीह के साथ एकता और मसीह की उनके लिए विनती करना, परमेश्वर की आत्मा और फल उनमें बने रहने के कारण वे परमेश्वर के अनुग्रह से वंचित नहीं किये जाते, परंतु परमेश्वर की सामर्थ में विश्वास के द्वारा उद्धार के लिए सुरक्षित रहते हैं।

प्रश्न 80 : क्या सच्चे विश्वासी पूर्ण दृढ़ता के साथ आश्वस्त होते हैं, कि वे अनुग्रह में हैं और उद्धार के लिए सुरक्षित हैं?

उत्तर : मसीह में सच्चे विश्वासी, जो धैर्य से अपने विवेक से उसमें बने रहते हैं, बिना

किसी असाधारण प्रकाशन से, वरन् उस विश्वास से जो परमेश्वर के वायदे की सच्चाई पर है, और आत्मा जो उन्हें इस योग्य करती है, वो अनुग्रह जिसमें जीवन का वायदा है, और उनकी आत्मा में साक्षी देती है, कि वे परमेश्वर की संतान हैं और वे पूर्ण दृढ़ता के साथ आश्वस्त होते हैं, कि वे अनुग्रह में हैं और उद्धार के लिये सुरक्षित हैं।

प्रश्न 81 : क्या सच्चे विश्वासी हमेशा इस बात के प्रति आश्वस्त होते हैं कि वे अनुग्रह में हैं और वे बचाए जाएंगे?

उत्तर : अनुग्रह और उद्धार का आश्वासन, विश्वास का अति आवश्यक हिस्सा नहीं है, सच्चे विश्वासी को, इसे पाने के लिए इन्तजार करना पड़ता है, और इसके आनन्द को जानने के बाद भी यह, पाप, परीक्षा, बुराई की वजह से कमजोर और थोड़े समय के लिए समाप्त हो सकता है, परंतु वे परमेश्वर की आत्मा के द्वारा त्यागे नहीं जाते, जो उन्हें गहरी निराशा में जाने से बचाकर, उनमें यह आश्वासन वापस पैदा करता है।

प्रश्न 82 : महिमा में संगति क्या है, जो अदृश्य कलीसिया के सदस्य की मसीह के साथ होती है?

उत्तर : महिमा में संगति जो अदृश्य कलीसिया के सदस्यों की मसीह के साथ होती है। इस जीवन में, मृत्यु के तत्काल पश्चात, अन्तत: वे पुनरुत्थान और न्याय के दिन पूर्ण सिद्ध होते हैं।

प्रश्न 83 : महिमा में यीशु के साथ संगति क्या है जिसका अदृश्य कलीसिया के सदस्य इस जीवन में आनन्द पाते हैं?

उत्तर : अदृश्य कलीसिया के सदस्यों को मसीह के साथ महिमा का पहला फल इस जीवन में प्राप्त होता है, जबकि वे उसके सदस्य हैं और मसीह उनका सिर है। इसलिये वह महिमा जो उसने पूर्णता पायी है, विश्वासी उस महिमा का हिस्सा है, जिसमें वे परमेश्वर के प्रेम का आनन्द, मन की शांति, पवित्र आत्मा में आनन्द, महिमा की आशा में शामिल है, जो परमेश्वर के बदले का क्रोध, मन की अशांति, न्याय का भय, मृत्यु के बाद की यातना जो अधर्मियों को होती है, के विपरीत है।

प्रश्न 84 : क्या सभी मनुष्य मरेंगे?

उत्तर : मृत्यु पाप की मजदूरी है। यह निश्चित है कि सभी एक बार मरेंगे, क्योंकि सभी ने पाप किया है।

प्रश्न 85 : जबकि मृत्यु पाप की मजदूरी है, क्यों धर्मी मृत्यु से छुटकारा नहीं पाते, जबकि उनके सभी पाप मसीह में क्षमा प्राप्त करते हैं?

उत्तर : धर्मीजन आखिरी दिन मृत्यु से छुटकारा प्राप्त करेंगे, और मृत्यु में भी वे मृत्यु के श्राप और डंक से छुटकारा पाते हैं। यद्यपि वे मरते हैं। वे परमेश्वर के प्रेम से (द्वारा), पूर्णता पाप और दुःख से आजादी पाते हैं, और इस योग्य होते हैं, कि वे मसीह की महिमा में उसके साथ संगति करें।

प्रश्न 86 : मसीह के साथ महिमा में संगति क्या है? जो विश्वासी की मृत्यु के तत्काल पश्चात् मसीह के साथ होती है।

उत्तर : मृत्यु के तत्काल पश्चात्, अदृश्य कलीसिया के सदस्यों की महिमा में मसीह के साथ संगति होती है, जिसमें उनकी आत्मा पवित्रता में सिद्ध होती है, और स्वर्ग में स्वीकार की जाती है। जहाँ वे परमेश्वर का मुख, महिमा के प्रकाश में देखते हैं, और अपने शरीर के पूर्ण छुटकारे का इन्तजार करते हैं, जो मृत्यु में भी यीशु से जुड़ा रहता और कब्र में विश्राम पाता है, और अंतिम दिन वापस अपनी आत्मा से जोड़ा जाएगा, जबकि अधर्मी की आत्मा नरक में डाल दी जाती है, जहाँ वह पीड़ा और अन्धकार में रहती है और उनके शरीरों को कब्र में कैदी की अवस्था में रखा जाता है, पुनरुत्थान और न्याय के दिन तक के लिए।

प्रश्न 87 : हमें पुनरुत्थान के विषय में क्या विश्वास करना चाहिए?

उत्तर : हमें विश्वास करना चाहिए, कि अन्तिम दिन में धर्मी और अधर्मी दोनों का मृतकों से साधारण पुनरुत्थान होगा, जो तब वे जो जीवित हैं, क्षणमात्र में परिवर्तित हो जाऐंगे, और मृतकों का वही शरीर जो कब्र में रखा गया था, उनकी आत्मा से हमेशा के लिए जुड़ (एक) जायेगा, और मसीह की सामर्थ से पुनरुत्थान होगा।

धर्मियों का शरीर मसीह की आत्मा और उसके पुनरुत्थान के गुणों में सामर्थ, आत्मिक, अविनाशी रूप से पुनरुत्थान प्राप्त करेगा, और मसीह की महिमायुक्त शरीर के समान होगा। अधर्मियों का शरीर अनादर के साथ, एक दुःखी न्यायाधीश के रूप में, उसके द्वारा पुनरुत्थान प्राप्त करेगा।

प्रश्न 88 : पुनरुत्थान के तत्काल पश्चात् क्या होगा ?

उत्तर : पुनरुत्थान के तत्काल पश्चात, स्वर्गदूतों और मनुष्यों का साधारण और अन्तिम न्याय होगा, उस दिन और घड़ी (समय) को कोई मनुष्य नहीं जानता, ताकि सभी जागृत और प्रार्थना करते रहें और प्रभु के आगमन के लिए हमेशा तैयार रहें।

प्रश्न 89 : अधर्मियों के साथ न्याय के दिन में क्या होगा ?

उत्तर : न्याय के दिन अधर्मी मसीह के बायीं ओर बैठेंगे और पूर्ण प्रमाण और उनके अपने विवेक में दोषी ठहरने के बाद, उनके विरुद्ध भय योग्य, पर उचित दोष, दण्ड लगाया जायेगा, उसके बाद उन्हें परमेश्वर की उपस्थिति और मसीह, उसके संतो और पवित्र स्वर्गदूतों की महीमायुक्त संगति से निकाल कर, नरक में उनके शरीर और आत्मा को शैतान और उसके दूतों के साथ, हमेशा के लिए डाल दिया जाएगा, जहाँ पर बयां न कर सकने वाली पीड़ा का दण्ड उन्हें मिलेगा।

प्रश्न 90 : धर्मियों के साथ न्याय के दिन क्या होगा?

उत्तर : न्याय के दिन, धर्मी मसीह के साथ बादलों में उठा लिये जाएंगे, वे उसके दाहिने बैठेंगे, जहाँ उनका सम्मान होगा और वे निर्दोष ठहराए जाएंगे, वे मसीह के साथ भ्रष्ट स्वर्गदूतों और मनुष्यों का न्याय करेंगे, और स्वर्ग में उनका स्वागत होगा, जहाँ वे हमेशा के लिए पाप और पीड़ा से छुटकारा पाकर, असीम आनन्द को प्राप्त करेंगे। विशेषकर परमेश्वर पिता, हमारे प्रभु यीशु मसीह और पवित्र आत्मा के सम्मुख, अनन्तकाल के लिए अनगिनत संत और स्वर्गदूतों के साथ उनके शरीर और आत्मा में पूर्ण पवित्रता और खुशियां प्राप्त करेंगे। और यह सिद्ध और पूर्ण संगति है, जो अदृश्य कलीसिया के सदस्य पुनरुत्थान और न्याय के दिन महीमा में मसीह के साथ प्राप्त करेंगे।

इस बात को जानने के बाद कि पवित्र शास्त्र क्या सिखाता है कि हम परमेश्वर पर विश्वास करें, आगे इस बात को भी जानना आवश्यक है कि उसके प्रति मनुष्य के कर्तव्य क्या है?

प्रश्न 91 : मनुष्य का कर्तव्य क्या है जो परमेश्वर मनुष्य से चाहता है?

उत्तर : कर्तव्य जो परमेश्वर मनुष्य से चाहता है, कि वह उसकी प्रगट इच्छा की आज्ञा माने।

प्रश्न 92 : परमेश्वर ने सर्वप्रथम मनुष्य के लिए आज्ञाकारिता के कौन से नियम को प्रगट किया है?

उत्तर : आज्ञाकारिता का नियम, जो परमेश्वर ने आदम के पतन से पहले और उसमें सभी मनुष्यों को दिया, भले और बुरे के ज्ञान के वृक्ष से न खाने के अलावा, नैतिक व्यवस्था थी।

प्रश्न 93 : नैतिक व्यवस्था क्या है?

उत्तर : नैतिक व्यवस्था (नियम) परमेश्वर की इच्छा, मनुष्य को बताना है, जो सभी

को व्यक्तिगत, सिद्ध और निरन्तर निर्देशित और आज्ञा मानने को कहती है। मनुष्य के पूरे मनुष्यत्व आत्मा और शरीर में पवित्रता और धार्मिकता के सभी कर्तव्य को पूरा करना है, जो परमेश्वर और मनुष्य के प्रति है। इसे पूरा करने में जीवन का वायदा और तोड़ने (न मानने) में मौत की चेतावनी है।

प्रश्न 94 : मनुष्य के पतन के बाद नैतिक नियम का क्या महत्व है?

उत्तर : यद्यपि पतन के बाद, कोई भी मनुष्य नैतिक व्यवस्था से धार्मिकता और जीवन नहीं प्राप्त कर सकता, फिर भी इसका बड़ा महत्व है और यह पतित और नया जन्म पाये हुए, सभी मनुष्य के लिये सामान्य है।

प्रश्न 95 : नैतिक व्यवस्था का सभी मनुष्यों के लिये क्या महत्व है?

उत्तर : नैतिक व्यवस्था का महत्व सभी मनुष्य के लिए है, कि यह उनको परमेश्वर का पवित्र स्वभाव और इच्छा प्रगट करती है, और उनकी जिम्मेदारी बताती है, कि वे उसके अनुरूप चले, इसे पूरा करने में यह मनुष्य को उसकी आयोग्यता की समझ देती है और उनके स्वभाव, हृदय और जीवन के पापमय स्थिति को बताती है, कि वे पाप और दु:ख में अपने मन में दीन बने, और मसीह और उसकी आज्ञाकारिता की सिद्धता की आवश्यकता की साफ समझ मनुष्य को देती है।

प्रश्न 96 : नैतिक व्यवस्था का पापी/पतित, मनुष्य के लिये क्या विशेष महत्व है?

उत्तर : नैतिक व्यवस्था पतित मनुष्य को जागृत करती है, कि वे आने वाले क्रोध से बचे और उन्हें मसीह की तरफ प्रेरित करती है, और यदि वे निरंतर पाप में बने रहते हैं, तो उनके लिए कोई बहाना नहीं है, और वे श्राप के आधीन हैं।

प्रश्न 97 : नये जन्म पाये हुए मनुष्य के लिए नैतिक व्यवस्था का क्या महत्व है?

उत्तर : यद्यपि उन्होंने नया जन्म पाया है, मसीह पर विश्वास करते हैं और वे नैतिक व्यवस्था (कार्य की वाचा) के आधीन नहीं, वे नैतिक व्यवस्था से न धर्मी न दोषी ठहरते हैं। फिर भी नैतिक व्यवस्था के साधारण महत्व जो सभी के लिए, इसका विश्वासी के लिए विशेष महत्व है, कि वे कितने मसीह के आधीन हैं जिसने इसे पूरा किया है, और मसीह ने उनके बदले इसके श्राप को उनकी भलाई के लिये सहन किया है, जिससे वे ज्यादा धन्यवादी हो जाएं और उसे बड़ी सावधानी से, अपने आपको साबित करते हुए इसे, आज्ञाकारिता का नियम मानें।

प्रश्न 98 : नैतिक व्यवस्था कहाँ सारांश में समझी जाती है?

उत्तर : नैतिक व्यवस्था सारांश में दस आज्ञाओं में समझी जाती है, जो सीने पर्वत पर परमेश्वर की आवाज द्वारा दी गई, और पत्थर को दो तख्ती पर उसके द्वारा लिखी गई और निर्गमन के 20वें अध्याय में अंकित है। पहली चार आज्ञाएं हमारी जिम्मेदारी परमेश्वर के लिए, और दूसरी छ: हमारी जिम्मेदारी मनुष्य के लिये बताती है।

प्रश्न 99 : दस आज्ञाओं को सही प्रकार से समझने के लिये कौन से नियम ध्यान में रखने आवश्यक हैं?

उत्तर : दस आज्ञाओं को सही प्रकार से समझने के लिये, अग्रलिखित नियम इस प्रकार हैं :

1. व्यवस्था सिद्ध है, और धार्मिकता के लिये सभी मनुष्य पर लागू होती है। इसलिए हमेशा पूर्ण आज्ञाकारिता और हर एक जिम्मेदारी की पूर्ण सिद्धता की मांग करती है, और छोटे-से-छोटे पाप को त्यागने को कहती है।
2. यह आत्मिक है। इसलिए, समझ, इच्छा, चाहत और अन्य सभी आत्मा की सामर्थ और शब्द, कार्य और नजरिए तक पहुँचती हैं।
3. एक ही बात अलग-अलग प्रकार से कई आज्ञाओं में करने और न करने के लिए कही गयी है।
4. जहाँ कर्तव्य आता है, विरोध में पाप मना है, जहाँ पाप करना मना है वहाँ कर्तव्य की आज्ञा है। जहाँ एक वायदा है विपरीत चेतावनी भी है, जहाँ चेतावनी है, विपरीत वायदा किया गया है।
5. जो परमेश्वर ने मना किया है, कभी भी किया नहीं जाना चाहिए। परमेश्वर ने जो आज्ञा दी हमेशा हमारे कर्तव्य हैं, फिर भी हर एक विशेष जिम्मेदारी हमेशा करने के लिए नहीं है।
6. एक पाप और जिम्मेदारी के अंतर्गत, उस प्रकार की सभी बातें मना की गई अथवा करने की आज्ञा दी गई, हर एक कारण, साधन, अवसर और पहचान के साथ उन्हें पूरा करना है।
7. हमको जिसकी आज्ञा दी गई है या मना किया गया है, हमें अपने हालात के अनुसार ध्यान रखना है, कि दूसरों के द्वारा भी ये न की जायें अथवा पूरी हो, उनके स्थिति के जिम्मेदारी के अनुसार।
8. जो दूसरों को आज्ञा दी गई, हमें भी अपने स्थान और बुलाहट के अनुसार उन्हें करना है। ताकि उनकी मदद हो और जो मना किया गया है हमें उसमें दूसरों के साथ सम्मिलित होना चाहिए।

प्रश्न 100 : वह कौन सी विशेष बातें हैं जो हमें 10 आज्ञाओं में ध्यान रखना है?

उत्तर : हमें दस आज्ञाओं में प्रस्तावना और आज्ञाओं के गुणों और कई कारण जो कुछ आज्ञाओं से जुड़े हैं, ध्यान में रखना है और अधिकाई से उन्हें पूरा करना है।

प्रश्न 101 : दस आज्ञाओं की प्रस्तावना (भूमिका) क्या है?

उत्तर : दस आज्ञाओं की प्रस्तावना इन शब्दों में व्यक्त की गई है ''मैं तुम्हारा परमेश्वर यहोवा हूँ, जो तुम्हें मिश्र देश, गुलामी के घर से निकाल लाया हूँ'' इसमें परमेश्वर अपनी प्रभुता प्रगट करते हैं। जो यहोवा, अनन्तकालीन, अपरिवर्तनीय और सर्वसामर्थी परमेश्वर है, वह अपने आप में है और अपने वचन और कार्यों को पूरा करता है, वह वाचा में परमेश्वर है, जैसे पुराने इस्राइल के साथ वैसे ही अपने सभी लोगों के साथ, वह जैसे मिश्र की गुलामी से उन्हें छुड़ा लाया, वैसे ही उसने हमें आत्मिक बन्धुआई से छुड़ाया है, इसलिए वह हमारा इकलौता परमेश्वर है और हमें उसकी सभी आज्ञाएं माननी है।

प्रश्न 102 : चार आज्ञाएं, जो हमारी जिम्मेदारी परमेश्वर के प्रति बताती है का सार क्या है?

उत्तर : चार आज्ञाएं जो हमारी जिममेदारी परमेश्वर के प्रति सिखाती हैं, का सार है कि हमें अपने प्रभु परमेश्वर से पूरे मन पूरी आत्मा और पूरी शक्ति और पूरी बुद्धि से प्रेम करना है।

प्रश्न 103 : पहली आज्ञा कौन सी है?

उत्तर : पहली आज्ञा है कि ''तू मुझे छोड़कर किसी को प्रभु करके न मानना।''

प्रश्न 104 : पहली आज्ञा में कौन सी जिम्मेदारी पूरी करनी है?

उत्तर : पहली आज्ञा में हमारी जिम्मेदारी है, कि हम सिर्फ एक सच्चे परमेश्वर को पहचाने और जाने कि वह हमारा परमेश्वर है, और उसकी आराधना और महीमा, सोचने, मनन करने, याद रखने, आदर, प्रशंसा, चुनाव, प्रेम करने, उसकी इच्छा रखने, उसका भय खाते हुए उस पर विश्वास करते हुए भरोसा, आशा, खुशी और आनन्द से करें। उसके प्रति जलन, उसे पुकारते हुए, उसकी प्रशंसा और धन्यवाद दें और पूर्णता उसकी आज्ञाकारिता और आधीनता में बने रहे, हर बात में सावधानी से उसकी प्रशंसा करें, यदि कुछ गलत करके उसको दु:ख पहुँचाते हैं, तो गलती का दु:ख करें, क्षमा मांगे, और उसके सामने दीन बने रहें।

प्रश्न 105 : पहली आज्ञा में कौन से पाप मना किये गये हैं?

उत्तर : पहली आज्ञा में अग्रलिखित पाप मना है – **नास्तिकता :** परमेश्वर को नकारना और न मानना एक पाप है। **मूर्तिपूजा :** परमेश्वर के अतिरिक्त किसी दूसरे की आराधना करना, कई ईश्वर को मानना, सच्चे परमेश्वर की जगह अन्य को परमेश्वर मानना, उसे परमेश्वर न मानना, कुछ छोड़ना अथवा अनदेखा करना जो उसका अधिकार है। इस आज्ञा में मना है। उसे अनदेखा, भूलना, गलत समझ लेना, गलत निष्कर्ष निकालना, भ्रष्ट और गन्दे विचार उसके बारे में करना, साहसी और जिज्ञासु खोज उसके रहस्य के बारे में, परमेश्वर से घृणा, आत्म प्रेम, आत्म खोज और अन्य अनियमित असंयत स्थिति हमारे दिमाग की, अथवा दूसरी चीजों के प्रति हमारी चाहत और उन्हें पूर्णता अथवा थोड़ी उससे अलग करना, व्यर्थ अविश्वास, गलत सोच, गलत विश्वास, अविश्वास, निराशा और संवेदनरहित न्याय के आधीन गलत साधनों का प्रयोग और उचित साधनों पर भरोसा, नाशवान खुशी और आनन्द, भ्रष्टता, अन्धापन और गुनगुनापन, परमेश्वर की बातों में अचेतन, अपने आपको परमेश्वर से अलग कर लेना, संतो, स्वर्ग दूतों अथवा अन्य किसी प्राणी से प्रार्थना करना और धार्मिक आराधना करना, शौतान से सलाह करना और उसके सुझाव को ध्यान से सुनना, मनुष्य को अपने विश्वास और विवेक का प्रभु बनाना, परमेश्वर और उसकी आज्ञाओं को अनदेखा करना, उसकी आत्मा का विरोध और उसे दु:खी करना, उसमें असंतुष्ट और अधीर होना, उस पर गलत दोष लगाना बुराई की पीड़ा के लिये, और उस भलाई जो हममें है और जिसे हम कर सकते हैं की प्रशंसा, भाग्य, मूर्ति, अपने आपको अथवा किसी अन्य प्राणी को देना मना है।

प्रश्न 106 : पहली आज्ञा में ''मेरे सामने'' शब्दों में हमें विशेषकर क्या सिखाया गया है?

उत्तर : ये शब्द मेरे सामने या मुझे छोड़, पहली आज्ञा में हमें सिखाते हैं, कि परमेश्वर जो सब देखता, सबका ध्यान रखता है, दूसरों को ईश्वर मानने के पाप से अत्यन्त अप्रसन्न होता है। इसलिये इसे मना करता है। उसको ईश्वर न मानना अथवा अन्य का ईश्वर मानना घृणित है। इसलिये यह आज्ञा हमें सिखाती है कि जो कुछ हम उसकी सेवा में करते हैं, उसकी इच्छानुसार करें।

प्रश्न 107 : दूसरी आज्ञा कौन सी है?

उत्तर ''तू अपने लिये कोई मूर्ति खोदकर न बनाना न किसी की प्रतिमा बनाना जो आकाश में व पृथ्वी पर व पृथ्वी के जल में है। तू उनको दण्डवत न करना और न उनकी उपासना करना, क्योंकि मैं तेरा परमेश्वर यहोवा जलन रखने

वाला ईश्वर हूँ और जो मुझसे बैर रखते हैं, उनके बेटों पोतों और परपोतों का भी पितरों का दण्ड दिया करता हूँ और जो मुझसे प्रेम रखते और मेरी आज्ञाओं को मानते हैं, उन हजारों पर करुणा किया करता हूँ।'' दूसरी आज्ञा है।

प्रश्न 108 : दूसरी आज्ञा कौन से कर्तव्य की माँग करती है?

उत्तर : दूसरी आज्ञा में कर्तव्य है, कि परमेश्वर ने अपने वचन में जिस प्रकार कहा है, वैसे ही सभी धार्मिक आराधना और अनुष्ठान, पूर्ण और पवित्र रखते हुए स्वीकार करना और मानना है। विशेषकर मसीह के नाम में प्रार्थना और धन्यवाद और वचन का पढ़ना, प्रचार करना और सुनना, संस्कार का प्रबन्धन और उसे प्राप्त करना, कलीसिया में शासन और अनुशासन, सेवा और देखभाल, धार्मिक उपवास, परमेश्वर के नाम की शपथ और वचन देना, सब कुछ परमेश्वर के वचन अनुसार करना है, और सभी गलत आराधना को अमान्य, गलत मानना और उनका विरोध करना है और हर एक को अपने स्थान और बुलाहट के अनुरूप मूर्तिपूजा और उसके स्मारक को दूर/अलग करना है।

प्रश्न 109 : वे कौन से पाप हैं जो दूसरी आज्ञा में मना किये गये हैं?

उत्तर : दूसरी आज्ञा में पाप मना किये गये है, कि वह धार्मिक आराधना जो परमेश्वर द्वारा नियुक्त नहीं की गई है, उसको सोचना, सलाह देना, आज्ञा देना, इस्तेमाल करना और मान्यता देना, गलत धर्म को सहना जो परमेश्वर अथवा त्रिएक में किसी एक को प्रस्तुत करता है, चाहे हमारे मन में अथवा बाहर किसी प्रतिमा, या किसी भी प्राणी की समानता में और इसकी आराधना करना, गढ़कर किसी भी ईश्वर का प्रतिनिधित्व करना, उनकी आराधना करना, उनकी सेवा करना, सभी अन्धविश्वास की सामग्री, परमेश्वर की आराधना को भ्रष्ट करना, इसमें कुछ जोड़ना या निकालना, चाहे हमने स्वयं उसको रचा है या परम्परा में दूसरों से पाया है, प्राचीनकाल उसे माना गया, रीति रिवाज, मनन, अच्छे उद्देश्य या किसी अन्य रूप, पद का बेचना खरीदना, धर्म का दुरुपयोग, अनदेखा, दोषी, बाधा पहुँचना गलत है और परमेश्वर के ठहराए हुए आराधना और अनुष्ठान का विरोध करना गलत है।

प्रश्न 110 : वे कौन सी बातें हैं जो दूसरी आज्ञा से साथ जुड़ी है जो इसे ज्यादा महत्व देती है?

उत्तर : दूसरी आज्ञा से जुड़े कारण इन शब्दों में अंकित हैं ''क्योंकि मैं तेरा ईश्वर यहोवा जलन रखने वाला ईश्वर हूँ और जो मुझसे बैर रखते हैं उनके बेटों,

पोतों और परपोतों को भी पितरों का दण्ड दिया करता हूँ और जो मुझसे प्रेम करते हैं और मेरी आज्ञाओं को मानते हैं उन हजारों पर करुणा किया करता हूँ।'' परमेश्वर की हमारे ऊपर प्रभुता और स्वामित्व के अलावा, उसकी उत्साहपूर्ण इच्छा अपनी आराधना के लिए है, और उसके बदले का क्रोध सभी अनुचित आराधना के विरुद्ध है, अनुचित आराधना जो कि एक आत्मिक वेश्यावृत्ति के समान है, और इसको तोड़ने वालों से वह असीम घृणा करता है और चेतावनी देता है, कि इसका दण्ड आने वाली कई पीढ़ियों को मिलेगा और जो इसे मानते हैं, उससे प्रेम करते और उसकी आज्ञा मानते हैं, उनकी कई पीढ़ियों तक, करुणा का वादा करता है।

प्रश्न 111 : तीसरी आज्ञा कौन सी है?

उत्तर : ''तू अपने परमेश्वर का नाम व्यर्थ न लेना, क्योंकि जो यहोवा का नाम व्यर्थ ले वह उसको निर्दोष न ठहराएगा।'' तीसरी आज्ञा है।

प्रश्न 112 : तीसरी आज्ञा में क्या आवश्यक (जरूरी) है?

उत्तर : तीसरी आज्ञा की मांग है, कि परमेश्वर का नाम, शीर्षक, गुण, अनुष्ठान, वचन, संस्कार, प्रार्थना, कसम, वायदा, उसके कार्य, या अन्य कुछ जिसके द्वारा वह अपने आप को प्रगट करता है, पवित्रता और आदर से विचार, मनन, शब्द, लेख, पवित्र अंगीकार में इस्तेमाल होने चाहिए, और उत्तर योग्य बातचीत में परमेश्वर की महिमा और हमारी और दूसरों की भलाई के लिये इस्तेमाल होने चाहिए।

प्रश्न 113 : तीसरी आज्ञा में कौन से पाप मना किये गये हैं ?

उत्तर : तीसरी आज्ञा में मना किये पाप हैं, कि परमेश्वर का नाम जैसा कहा गया है न लेना, और इसका–अनजाने, व्यर्थ, अनादर, घृणित, अन्धविश्वास, अधार्मिकता से गलत इस्तेमाल करना मना है, और उसके शीर्षक, गुण, अनुष्ठान और कार्यों को चुगली, झूठ, सभी पापपूर्ण श्राप, कसम, वायदा, अपनी कसम और वायदे को तोड़ना यदि वे ठीक हैं, और उन्हें पूरा किया है, यदि अनुचित है, चिड़चिड़ाना और झगड़ना, परमेश्वर की योजना और प्रयोजन का गलत प्रयोग, परमेश्वर के वचन को बदलना गलत अर्थ और गलत इस्तेमाल से, और घृणित मजाक, जिज्ञासु अथवा बिना लाभ के सवाल, गलत सिद्धातों को मानना, इसका गलत प्रयोग, प्राणी और अन्य कुछ भी परमेश्वर नाम की जगह पापपूर्ण अभिलाषा और कार्य करना, घृणित ठहराना मना है। और किसी भी प्रकार से परमेश्वर की सच्चाई, अनुग्रह और मार्ग का विरोध करना, धर्म का अंगीकार दिखावे के लिए और खेदजनक करना, इसके लिए शर्मसार होना और इस पर

शर्मिन्दा होना अप्रमाणिक, बुद्धिहीन, फलरहित और आहत पहुँचाने वाली चाहत से और इससे पीछे हटना। ये सभी पाप तीसरी आज्ञा में मना किये गये हैं।

प्रश्न 114 : तीसरी आज्ञा के साथ कौन से तर्क (उद्देश्य) जुड़े हैं?

उत्तर : तीसरी आज्ञा से जुड़े हुए उद्देश्य हैं ''क्योंकि जो यहोवा का नाम व्यर्थ ले वह उसको निर्दोष न ठहरायेगा।'' ऐसा इसलिये है, क्योंकि वह हमारा प्रभु परमेश्वर है, इसलिए उसका नाम घृणित न किया जाए और न ही किसी प्रकार से हमारे द्वारा उसके नाम की निन्दा हो, विशेष कर इसलिये क्योंकि वह इस आज्ञा के तोड़ने वालों को निर्दोष ठहराने और बचाने से कोसो दूर है, और वे उसके धार्मिक श्राप से बच नहीं पायेंगे, यद्यपि कई बचाव में मनुष्य पर दण्ड और दोष लग चुका है।

प्रश्न 115 : चौथी आज्ञा कौन सी है?

उत्तर : ''तू विश्राम दिन को पवित्र मानने के लिए स्मरण रखना, छः दिन तो तू परिश्रम करके अपना सब काम काज करना, परंतु सातवा दिन तेरे परमेश्वर यहोवा के लिये विश्राम दिन है। उस दिन न तो तू किसी भांति का काम काज करना और न तेरा बेटा, न तेरी बेटी, न तेरा दास, न तेरा दासी, न तेरे पशु न कोई परदेशी जो तेरे फाटों के भीतर हो। क्योंकि छः दिन में यहोवा ने आकाश और पृथ्वी और समुद्र और जो कुछ उसमें है, सबको बनाया और सातवें दिन विश्राम किया, इस कारण यहोवा ने विश्राम दिन को आशीष दी और उसको पवित्र ठहराया।'' चौथी आज्ञा है।

प्रश्न 116 : चौथी आज्ञा मनुष्य से क्या चाहती है?

उत्तर : चौथी आज्ञा मनुष्य चाहती है, कि परमेश्वर के नियुक्त किये हुए समय को सभी मनुष्य द्वारा शुद्ध रखते हुए, पवित्र रखना है, वचन के अनुसार जो सात दिनों में से एक, जो संसार की शुरुआत से यीशु के पुनरुत्थान तक सातवां दिन था, और तब से सप्ताह का पहला दिन है, और संसार के अंत तक यही रहेगा जो मसीही विश्राम दिन है, और नये नियम में इसे प्रभु का दिन कहा गया है।

प्रश्न 117 : किस प्रकार विश्राम दिन/प्रभु का दिन, पवित्र माना जाता है?

उत्तर : विश्राम/प्रभु का दिन, पूरे दिन पवित्र विश्राम से शुद्ध होता है। सिर्फ उन कार्यों से ही नहीं जो हमेशा पापमय है, परंतु संसार के उन कार्यों से भी जो अन्य दिन उचित कार्य है, विश्राम करना है और आनन्द के साथ पूरा दिन (सिर्फ अनिवार्य और करुणा के कार्य छोड़कर) सामूहिक और व्यक्तिगत रीति से परमेश्वर की आराधना में बिताए, और उसके लिए पहले से हम अपने

हृदय को तैयार करे, और पूर्वानुमान, सावधनी और सयमता के साथ अपने संसारी कार्य को पहले से निपटा ले, या बाद के लिए रख छोड़ें ताकि हम ज्यादा आजादी से विश्राम दिन के कर्तव्य निभा सकें।

प्रश्न 118 : क्यों विश्राम दिन की जिम्मेदारी परिवार के शासक या बड़ो को दी गई है कि इसका ख्याल रखें?

उत्तर : विश्राम दिन को पवित्र रखने की जिम्मेदारी परिवार के शासक व अन्य बड़ों की दी गयी है। क्योंकि वे सिर्फ अपने लिए ही इसे नहीं मानते वरन जो भी उनके अधीन है, उनके द्वारा विश्राम दिन को पवित्र रखना है। क्योंकि अधिकतर उनका झुकाव इस तरफ होता है, कि वे अपने से छोटो और नौकरों से काम कराके, उनके विश्राम दिन की जिम्मेदारी को बाधित करें।

प्रश्न 119 : कौन से पाप चौथी आज्ञा में मना किये गये है?

उत्तर : चौथी आज्ञा में मना किये गये पाप है। कोई भी कार्य असावधानी, अनजाने, और बिना लाभ के करना और उनके बारे में चिन्ता करना मना है, और निर्जीवता से दिन को दूषित करना, और जो अपने आप में पापमय है करना, और गैर जरूरी (अनावश्यक) कार्य और विचार, संसार के काम और नौकरी से सम्बन्धित कार्य करके दिन को घृणित ठहराना मना हैं।

प्रश्न 120 : चौथी आज्ञा में इसे ज्यादा करने के लिए इसमें कौन से उद्देश्य (तर्क) जुड़े हैं?

उत्तर : चौथी आज्ञा में इसें ज्यादा महत्व देने के लिए उद्देश्य जुड़े है। उन्हें इसकी निष्पक्षता से लिया गया है। परमेश्वर सात में से छह दिन हमें अपने कार्यों के लिए देता है। और एक दिन अपने लिए रखता है, वह कहता है ''छः दिन तो तू परिश्रम करके अपना काम काज करना'' परमेश्वर उस एक दिन में विशेष स्वामित्व की चुनौती देता है वह कहता है, ''परन्तु सांतवा दिन तेरे परमेश्वर यहोवा के लिये विश्राम दिन है'' परमेश्वर के स्वयं के उदाहरण से ''जिसने छः दिन में आकाश और पृथ्वी और समुद्र और जो कुछ उनमें है बनाया और सातवें दिन विश्राम किया'', और परमेश्वर ने इस दिन को अशीषित ठहराया। सिर्फ इससे नहीं कि उसने इसे अपनी सेवा के लिये पवित्र किया है, वरन इसमें कि यह हमारे लिए आशीष का माध्यम है, जब हम इस पवित्र रखते है। इस कारण यहोवा ने विश्राम दिन को आशीष दी और इसे पवित्र ठहराया।

प्रश्न 121 : चौथी आज्ञा में ''स्मरण रखना'' शब्द परमेश्वर ने क्यों कहा?

उत्तर : चौथी आज्ञा में ''स्मरण रखना'' शब्द परमेश्वर ने कहा-क्योंकि इसे याद रखने में बड़े फायदे-आशीष है। इससे हमें इसे पूरा करने की तैयारी में मदद मिलती है, और इसे पूरा करने में अच्छा है, कि अन्य सभी आज्ञा भी पूरी की जाए और निरन्तर सृष्टि और छुटकारे के फायदे की धन्यवादी यादगार बनी रहे, जिसमें धर्म का सार है। अन्य वजह यह भी है कि हमारी प्रवृत्ति भूलने की है, इसके लिए प्रकृति का साधारण प्रकाश बहुत कम है। जबकि यह हमारी स्वाभाविक आज़ादी को, जो दूसरे समय पर न्याय संगत है सीमित करती है। और यह सात में से एक दिन होती है। और बहुत से सांसारिक काम बीच में होते है, और हम इस बारे में विचार नहीं कर पाते, न ही इसके लिए तैयार होते, न ही इसे पवित्र करते है। और शैतान अपने माध्यम से इसकी महिमा को कलंकित करते हुए, इसकी याद मिटा कर, सब अधर्म अैर अपवित्रता मनुष्य में लाना चाहता है, इसलिए इसे स्मरण रखने को कहा गया है।

प्रश्न 122 : दूसरी छह आज्ञाओं का जो मनुष्य के प्रति हमारे कर्तव्य बताती है सार क्या है।

उत्तर : छह आज्ञाओं का जो हमारे कर्तव्य मनुष्य के प्रति बताती है, का सार है। तू अपने पड़ोसी से अपने समान प्रेम रख और उनके साथ वैसा व्यवहार कर जैसा तू चाहता है कि वे तेरे साथ करें।

प्रश्न 123 : पांचवी आज्ञा कौन सी है?

उत्तर : तू अपने पिता और अपनी माता का आदर करना, जिससे जो देश तेरा परमेश्वर यहोवा तुझे देता है, उस में तू बहुत दिन तक रहने पाए।

प्रश्न 124 : पांचवी आज्ञा में पिता और माता से क्या तात्पर्य है?

उत्तर : पिता और माता का तात्पर्य पांचवी आज्ञा में, सिर्फ स्वभाविक माता-पिता से ही नहीं है। वरन सभी उम्र और अनुभव में बड़े, विशेषकर वे जिन्हें परमेश्वर द्वारा हमारे ऊपर-अधिकार दिया गया है-परिवार में, कलीसिया और राष्ट्र में इत्यादि में।

प्रश्न 125 : वे जो श्रेष्ठ (वरिष्ठ)है क्यों उन्हें माता और पिता का सम्मान दिया गया है?

उत्तर : श्रेष्ठ (वरिष्ठ) लोगों का माता पिता के समान इसलिए माना गया, कि उन्हें, (वरिष्ठ) अपने से छोटे के प्रति स्वभाविक माता पिता के समान सारे कर्तव्य सिखाए जा सके, वे अपने कई रिश्तों के आधार पर छोटे से प्रेम

और कृपा दिखा सके, छोटे बड़ों के साथ और अपने माता-पिता के समान ही इच्छा, आदर, और आनन्द के साथ अपने कर्तव्य को कर सकें।

प्रश्न 126 : पांचवी आज्ञा का साधारण कार्यक्षेत्र (आशय) क्या है?

उत्तर : पांचवी आज्ञा का कार्यक्षेत्र है, वे जिम्मेदारियाँ जो कई सम्बन्धों में छोटे, बड़े और समान रूप में एक दूसरे से निभाते हैं।

प्रश्न 127 : वह सम्मान क्या है, जो छोटे-बड़ों को देते है?

उत्तर : छोटो का बड़ो के प्रति सम्मान है, कि वे हृदय, वचन, व्यवहार, प्रार्थना और उनके लिए धन्यवाद, उनके गुण और अनुग्रह की नकल, उनकी उचित आज्ञा और सलाह को मानना, उनके सुधार को स्वीकारना, उनके व्यक्तित्व और अधिकार को उनके स्थिति के अनुसार सुरक्षित रखना, सभी बड़े आदर के साथ पूरा करे, और उनकी कमजोरियों को समझना और प्रेम से उसे ढ़कना ताकि वे उन्हें और उनके शासन का सम्मान दे पाये।

प्रश्न 128 : छोटे बड़ों के विरूद्ध क्या पाप करते है?

उत्तर : छोटे बड़ों के विरूद्ध कुछ पाप करते है। जब वे बड़ों के प्रति अपनी जिम्मेदारी को अनदेखा करते हैं, इससे जलन और गलत मानते है। और उनकी उचित सलाह, आज्ञा, सुधार और उनके विरूद्ध विद्रोह करते है, और उन्हें श्राप, उनका मजाक, और नीची और घृणित बातें करके उनके और उनके शासन के प्रति अनादर और निन्दा करते है।

प्रश्न 129 : बड़ों की छोटों के प्रति क्या ज़िम्मेदारी है?

उत्तर : उस अधिकार को जो वे परमेश्वर से पाते हैं, और वह सम्बन्ध जहाँ वे होते है, बड़ों की जिम्मेदारी है। वे छोटे से प्रेम, उनके लिए प्रार्थना करें, उन्हें आशीष, चेतावनी, सलाह दे, उनकी प्रशंसा, समर्थन और उत्साहित करें और उनके अच्छे कार्य में उन्हें पुरुस्कृत करे, और यदि छोटे गलत करते है तो उन्हें गलत कहें, और जो भी शरीर और आत्मा के लिये जरूरी है, उसकी रक्षा करें, और उसे उनके लिए उपलब्ध कराए, और बुद्धिमता, पवित्रता और उदाहरण के द्वारा परमेश्वर को महिमा और अपने सम्मान को बढ़ाएं और जो अधिकार परमेश्वर ने उन्हें दिया है, उसको सुरक्षित रखें।

प्रश्न 130 : बड़ों के पाप क्या है?

उत्तर : अपनी ज़िम्मेदारियों को अनदेखा करने के अतिरिक्त बड़ों के पाप है, अपने आपके लिए असाधारण चाहत, अपनी महिमा, अपना आराम, फायदा और आनन्द की चाहत रखना, और अनुचित, और ऐसी बात की आज्ञा देना जो

छोटे कर नही सकते, गलत कामों में उन्हें सलाह, उत्साह और उनका पक्ष लेना, और जो अच्छा है उसमे उन्हे निरूत्साहित, उनका असमर्थन करना, असावधानी से उन्हें बुराई, परीक्षा और खतरे में ले जाना, उन्हें गुस्सा दिलाना, और अनुचित, नासमझी, कठोर और कर्तव्य के प्रति असावधानी भरे व्यवहार से अपना अनादर और अपने अधिकार को कम करना।

प्रश्न 131 : समकक्ष (एक समान) लोगों के क्या कर्तव्य है?

उत्तर : समकक्ष (समान) लोगों की ज़िम्मेदारी है, कि वे एक दूसरे को आदर और मूल्य दे, दूसरों के सामने एक दूसरे का आदर करे, एक दूसरे के गुणों और आगे बढ़ने में खुश हो, जैसे कि अपने स्वंय के।

प्रश्न 132 : एक समान लोगों के पाप क्या है?

उत्तर : अपने कर्तव्य को अनदेखा करने के अतिरिक्त एक समान लोगों के पाप है। एक दूसरे को कम अहमियत देना, गुणों से ईष्या करना, दूसरे की सफलता से दु:खी होना और दूसरे की श्रेष्ठता पर अवैध अधिकार करना।

प्रश्न 133 : पांचवी आज्ञा को ज्यादा मानने के लिए कौन से उद्देश्य इससे जुड़े हैं?

उत्तर : पांचवी आज्ञा के साथ इन शब्दों में उद्देश्य जुड़े है। ''जिस से जो देश तेरा परमेश्वर तुझे देता है उसमें तु बहुत दिन तक रहने पाए'' जो इस आज्ञा को मानते हुए परमेश्वर की महिमा, अपनी भलाई के लिए करते है। उनके लिए लम्बा जीवन और सफलता का वादा परमेश्वर न किया है।

प्रश्न 134 : छठी आज्ञा कौन सी है?

उत्तर : ''तू खून न करना''- छठी आज्ञा है।

प्रश्न 135 : छठी आज्ञा की कौन सी ज़िम्मेदारियाँ/कर्तव्य है?

उत्तर : छठी आज्ञा के कर्तव्य है, पूर्ण सावधावी और उचित प्रयास से, अपने विचार और उद्देश्य से संघर्ष करते हए, और अपने आवेश पर नियंत्रण रखते हुए, अपने और दूसरों के जीवन को सुरक्षित रखना है। हर एक अवसर, परीक्षा और कार्य को अलग करना है, जो किसी के जीवन को समाप्त कर सकते है, परमेश्वर के साथ धीरज, मन की शान्ति, आत्मा की खुशी, उग्रता से उचित बचाव में जरूरी है, और भलाई के विचार, प्रेम, दया, दीनता, नम्रता, करूणा, शान्ति, सच्ची वाणी और व्यवहार, संयम से मीट का इस्तेमाल, पीना, सोना मेहनत और विश्राम करना है। और सहनशक्ति से मेल-मिलाप के लिए तत्पर, धैर्य रखना और चोट को भुलाना, गलती क्षमा करना, बुराई के बदले भलाई, निराश को तसल्ली देना और निर्दोष को बचाना व समर्थन देना है।

प्रश्न 136 : छठी आज्ञा में कौन से पाप मना किये गये है?

उत्तर : छठी आज्ञा में पाप मना किये गये है। सामूहिक न्याय, उचित युद्ध, और अनिवार्य बचाव के अतिरिक्त, अपना या किसी अन्य का जीवन लेना मना है। और जीवन को सुरक्षित रखने के लिए अनिवार्य और उचित माध्यम का अलग करना या उन्हें अनदेखा करना, और पापमय क्रोध, नफरत, जलन बदले की इच्छा, पूर्ण आवेश, सुरक्षा तोड़ना, मीट व शराब, परिश्रम और विश्राम, मनोंरजन का गलत इस्तेमाल, गुस्सा दिलाने वाले शब्द, दबाव, झगड़ा, मारना, चोट पहुँचाना और अन्य कोई भी बात जो किसी के जीवन को समाप्त कर सकती है। मना है।

प्रश्न 137 : सातवी आज्ञा कौन सी है?

उत्तर : ''तू व्याभिचार न करना'', सातवीं आज्ञा है।

प्रश्न 138 : सातवीं आज्ञा में कौन सी ज़िम्मेदारियाँ है?

उत्तर : सातवीं आज्ञा की जिम्मेदारियाँ है-शरीर, मन, इच्छा, चाहत, वचन और व्यवहार में पवित्रता, अपने आप और दूसरों में इसे सुरक्षित रखना, चेतना और दृष्टि पर नियन्तण रखना, संयम, पवित्र लोगों की संगति, वस्त्र में शालीनता, जिन्हे ब्रह्मचर्य और दाम्पत्य और जो यौन सम्बन्ध नहीं रख सकते उनसे विवाह न करना, हमारी बुलाहट में कड़ा परिश्रम करना, और घृणित कार्यो, अवसरों से अलग रहना और उसके लिए परीक्षा से संघर्ष करना- जिम्मेदारियाँ है।

प्रश्न 139 : सातवीं आज्ञा में कौन से पाप मना किये गये है?

उत्तर : कर्तव्यों को अनदेखा करने के अतिरिक्त पाप जो सातवीं आज्ञा में मना किये गये हैं, व्यभिचार, विवाह से पहले यौन सम्बन्ध, कौटुम्बिक व्यभिचार और सभी अस्वभाविक अभिलाषाएं, सभी भ्रष्ट व गन्दी बाते करना और उन्हें सुनना, विवेकहीन दृष्टि, निर्लज्ज व्यवहार, अश्लील पहनावा, उचित विवाह मना करना और अनुचित को बढ़ावा देना, गन्दे विचारों की अनुमति देना और उन्हें आश्रय देना, शादी न करने की शपथ को बाधित करना, विवाह को बिना वजह टालना, एक ही समय में कई पति अथवा पत्नी रखना, अनुचित तलाक और छोड़ना, आलस्य, बहुत खाना (पेटू), अत्याधिक शराब पीना, अपवित्र लोगों की संगति व उत्तेजित करने वाले गीत सुनना, पुस्तक पड़ना, नाचना व नाटक खेलना और अन्य सभी उत्तेजित करने वाले गन्दे काम स्वयं अथवा दूसरों से करना मना है।

प्रश्न 140 : आठवी आज्ञा कौन सी है?

उत्तर : ''तू चोरी न करना''-आठवी आज्ञा है।

प्रश्न 141 : आठवी आज्ञा में कौन से कर्तव्य की मांग है?

उत्तर : आठवी आज्ञा में कर्तव्य आवश्यक है, मनुष्य और मनुष्य के बीच समझौते और व्यपार में सच्चाई, विश्वास योग्यता,और न्याय आवश्यक है, हर एक को उसका अधिकार मिलना चाहिए। अनुचित रीति से मालिक से उसकी सम्पत्ति हथियाना मना है। अपनी योग्यता और दूसरों की आवश्यकता के अनुसार स्वतन्त्र लेन देन, सांसारिक धन के विषय में हमारे निष्कर्ष, इच्छा और चाहत में संयमता हमारे स्वभाव के पोषण के लिए जो भी जरूरी और आरामदायक है, उसे परिश्रम, सुरक्षा और अध्ययन से पाना, इस्तेमाल करना और फेंकना, जो हमारी स्थिति के योग्य है। उचित बुलाहट और इसमें परिश्रम, अनावश्यक मुकद्मों को छोड़ देना, और निश्चयता और उचित और न्यायसंगत परिश्रम से जैसे अपनी वैसे ही, दूसरों की सम्पत्ति की सुरक्षा और बढ़ोत्तरी करना आठवी आज्ञा के कर्तव्य हैं।

प्रश्न 142 : कौन से पाप आठवी आज्ञा में मना किये गये है?

उत्तर : अपनी ज़िम्मेदारियों को अनदेखा करने के अतिरिक्त, आठवी आज्ञा में मना किये गये पाप है। चोरी, डकैती, मनुष्य को बहकाना, और कुछ भी लेना जो चोरी का है। मनुष्यों के बीच समझौतो और सच्चाई के मामले में धोखधड़ी, गलत तोलना, चिन्ह मिटाना, अन्याय और अविश्वास योग्यता मना है। दबाव, रंगदारी, अधिक ब्याज, घूस कंजूसी, मुकदमा, अनुचित आबादी उजाड़ना मना है। कीमत बढ़ाने के लिए समान दबा लेना, और सभी अनुचित और पापमय रास्तों से अपने पड़ोसी से जो उसका है अलग करना, या अपने को धनी बनाने के लिए उससे लेना मना है, लालच, ऊचे दाम से संसार की वस्तुओं पर प्रभाव डालना मना है। और उन्हें इस्तेमाल, पाने और रखने के लिए अविश्वास, बाधा और अध्ययन को प्रभावित करना, दूसरों की सफलता से ईष्या करना, आलसी, फिजूलखर्ची और बेकार का खेल, ओर अन्य किसी भी प्रकार से हम अनुचित पक्षपात करके अपने बाहरी स्थिति उठाते है। और अपने आप को धोखा देकर, परमेश्वर द्वारा दी गई स्थिति का इस्तेमाल और आराम प्राप्त करते है, मना है।

प्रश्न 143 : नौवी आज्ञा कौन सी है?

उत्तर : ''तू अपने पड़ोसी के विरुद्ध झूठी गवाही न देना''-नौवी आज्ञा है।

प्रश्न 144 : नौवी आज्ञा में कौन से कर्तव्य आवश्यक है?

उत्तर : नौवी आज्ञा में कर्तव्य जो आवश्यक है। अपने पड़ोसी के भले नाम और अपने भलेनाम के लिए मनुष्य का मनुष्य के बीच सच्चाई को सुरक्षित रखना और बढ़ाना है। सच के लिए आगे आना और खड़े होना, उचित और न्याय अथवा अन्य किसी मामलो में हृदय से, सच्चाई से, आजादी से साफ-साफ और पूर्ण सत्य और सत्य ही बोलना है। अपने पड़ोसी की भलाई करनी और उनके भले नाम में प्रेम, चाहत और खुश रहना है, उनकी कमजोरी के लिए दु:खी होना और उसे छुपाना है। उनकी योग्यता और भलाई को मानना, और उनकी निर्दोषता का समर्थन करना है और उनके विषय में अच्छी बात सुनने के लिए तत्पर रहे और गलत बात स्वीकार न करें। कहानी कहने वाले, झूठी प्रशंसा करने वाले, और धोखा देने वालों को हतोत्साहित करें, अपने भले नाम से प्रेम और सुरक्षा और जरूरत पड़ने पर पड़ोसी का बचाव करें। उचित वायदों को पूरा करे, और सभी बातें जो सही, सत्यप्रिय और अच्छी है, उनका अध्ययन और प्रयोग करें।

प्रश्न 145 : कौन से पाप है जो नौवी आज्ञा में मना किये गये है?

उत्तर : नौवी आज्ञा में मना किये पाप है, अदालत अथवा सामूहिक कचहरी में अपने और अपने पड़ोसी के भले नाम के लिए सत्य को हानि पहुँचाना मना है। झूठे प्रमाण देना, झूठी गवाही प्रस्तुत करना, चालाकी दिखाना और बुरी बात के लिए आवेदन करना, सच्चाई को बढ़ा-चढ़ाकर प्रस्तुत करना, अनुचित फैसला करना, बुराई को अच्छा कहना अच्छे को बुरा कहना मना है। बुराई को अच्छाई का परिणाम देना, धर्मी को बुराई के कार्य का प्रतिफल देना। सच को समाप्त करना, उचित मामले में चुप रहना, और शान्त बने रहना, जब बुराई के प्रमाण के लिए पूछा जाता है, मना है। सच्चाई को बिना समय के बोलना और गलत निष्कर्ष निकालना, शक के साथ प्रस्तुत करना, और सच्चाई और न्याय को हानि पहुँचाना मना है। और झूठ, असत्य,धोखाधड़ी, चुगली, कहानी कहना, खुसर-पुसर, नाश कठोरता और दोष लगाना मना है।

उद्देश्य, शब्द और काम को तोड़ना मरोड़ना। झूठी तारीफ, घमण्ड, सोच और अपने बारे में और दूसरे के विषय में, बहुत बढ़चढ़कर अथवा थोड़ा बोलना मना है। छोटी गलती को बढ़ाना, जब पाप स्वतन्त्रता के साथ अंगीकार करने की बात होती है। इसे छिपाना, अनावश्यक रूप से कमजोरी को प्रगट करना, झूठी अफवाहों को हवा देना, गलत बातों को सुनना, और अपने कानों को उचित बात के लिए बन्द करना, बुरा शक, किसी की

प्रशंसा के हक से ईष्या करना और दु:खी होना और उसे खत्म करने के लिए प्रयास करना, उनके अनादर-अपमान में खुश होना, उचित वायदों को तोड़ना, अच्छी सूचना को अनदेखा करना और इसमें लगे रहना, स्वयं इससे अलग न करना ऐसा सब करना बुरा है। जो मना है।

प्रश्न 146 : दसवी आज्ञा कौन सी है?

उत्तर : ''तू किसी के घर का लालच न करना, न तो किसी की स्त्री का लालच करना, न किसी के दास-दासी व बैल, गदहे का, न किसी की किसी वस्तु का लालच करना''-दसवी आज्ञा है।

प्रश्न 147 : दसवी आज्ञा के आवश्यक कर्तव्य क्या है?

उत्तर : दसवी आज्ञा के कर्तव्य है। कि हमें हमारी स्थिति हालात में पूर्ण सन्तुष्ट होना है। और हमारे पड़ोसी के लिए हमारी आत्मा का भलाई का, व्यवहार होना चाहिए, और हमारे सभी आन्तरिक क्रिया और मर्म उन्हें स्पर्श करें, और जो उसका है उसको बढ़ाएं।

प्रश्न 148 : दसवी आज्ञा में कौन से पाप मना किये गये है?

उत्तर : दसवी आज्ञा में मना किये गये पाप है, अपनी स्वयं की स्थिति से असन्तुष्टि, और अपने पड़ोसी और उसकी सम्पदा से ईष्या और दु:ख करना और कुछ भी जो उसका है, उससे अत्यन्त लगाव और चाहत रखनी मना है।

प्रश्न 149 : क्या कोई मनुष्य है जो परिपूर्णता से परमेश्वर की आज्ञाओं को पूरा कर सके?

उत्तर : कोई भी मनुष्य अपने आप में और किसी भी अनुग्रह से जो उसे इस जीवन में प्राप्त होता है, इस योग्य नहीं है कि, वह पूर्णता से परमेश्वर की आज्ञा को पूरा कर सके। वरन् प्रतिदिन विचार, वचन और कार्यों से वह इन्हें तोड़ता है।

प्रश्न 150 : क्या परमेश्वर की सभी व्यवस्थाओं को तोड़ना, अपने आप में और परमेश्वर की दृष्टि में समान रीति से घृणित है?

उत्तर : परमेश्वर की सभी व्यवस्था को तोड़ना समान रीति से घृणित नहीं है, वरन् कुछ पाप अपने आप में और उनकी उग्रता के कारण, परमेश्वर की दृष्टि में दूसरे की अपेक्षा ज्यादा घृणित है।

प्रश्न 151 : वे कौन सी वृद्धि, उग्रता/बातें है, जो कुछ पापों को अन्य की अपेक्षा ज्यादा घृणित बना देते है?

उत्तर : पाप अपनी उग्रता अग्रलिखित बातों से प्राप्त करते है :

1. **जो इसे तोड़कर दूसरों को दु:ख पहुँचाता है**-यदि वे उम्र में बड़े है। ज्यादा अनुभव और अनुग्रह मे आगे है। व्यवसाय में प्रभावशाली, गुण, स्थिति, पद बड़े है, जो दूसरों के पथ प्रर्दशक और जिसके नमूने सम्भवता दूसरे अनुकरण करे।
2. **वे लोग जो दु:ख पाते है**-यदि वे तत्काल परमश्वेर ओर उसके गुणों के विरोधी हो जाते है, और मसीह और उसके अनुग्रह, पवित्र आत्मा, उसकी साक्षी और कार्यों के विरोधी हो जाए, प्रभावशाली मनुष्यों और बड़ों के विरुद्ध हो जाए, संतों के विरुद्ध विशेष कर कमजोर भाइयों और उनकी आत्मा, या अन्य कोई, या सभी, या बहुतों की भलाई के विरुद्ध हो जाए।
3. **अपमान/अपराध के स्वाभाव और गुण/दोष के आधार पर**-यदि यह प्रगट की गई व्यवस्था के वचन के विरूद्ध है। कई आज्ञाए तोड़ी है। जो कई पाप है। सिर्फ हृदय में सोचा ही नहीं, वरन शब्दों और कार्य में तोड़ा भी, दूसरे को धोखा दिया और उसकी क्षतिपूर्ति नहीं करते।

   यदि ये पाप साधन, करूणा, न्याय, प्रकृति का प्रकाश, विवेक की दृढता, कलीसिया के अनुशासन, और राजकीय दण्ड के विरूद्ध है। यदि ये पाप हमारी प्रार्थना, उद्देश्य, वायदा, शपथ, वाचा और परमेश्वर और मनुष्य के विरूद्ध है। यदि इसे जानबूझकर, इच्छा से, दुस्साहस, निर्लज्जता, घमण्ड, बार-बार आनन्द के साथ, निरन्तर किया जाता हैं। अथवा पश्चाताप के बाद फिर किया जाता है।
4. **समय-स्थान और हालात पर आधारित**-यदि प्रभु के दिन या अन्य किसी, उसकी आराधना के समय, या तत्काल पहले या बाद में, या इसे रोकने के लिए दूसरी मदद, अथवा छुटकारे के लिए और विफलता, सामूहिक स्थान या ऐसे लोगों के सामने जो इससे सम्भवता प्रभावित होकर दूषित तो जाए।

प्रश्न 152 : हर पाप का बदला परमेश्वर क्या देता है ?

उत्तर : हर पाप-सबसे छोटा भी, परमेश्वर की प्रभुता, परमेश्वर की पवित्रता और भलाई और परमेश्वर की धार्मिकता के विरूद्ध होने के कारण, परमेश्वर के क्रोध, श्राप को इस जीवन और आने वाले समय में अपने ऊपर लाता है। और उसका कोई भी पश्चाताप नहीं है। बस एक मात्र मसीह का खून।

प्रश्न 153 : परमेश्वर हमसे क्या चाहता है, कि हम उसके क्रोध ओर श्राप से बच जाए, जो हम, व्यवस्था को तोड़कर अपने ऊपर लाते है?

उत्तर : हम, उसके क्रोध और श्राप से बच जाए, जो व्यवस्था तोड़कर हम अपने ऊपर लाए है। परमेश्वर हमसे चाहता है, कि हम परमेश्वर से पश्चाताप करे, और प्रभु यीशु मसीह पर विश्वास लाए और बाहरी साधन का सही इस्तेमाल करें, जिसके द्वारा मसीह हमें उसकी मध्यस्थता के फायदे प्रदान करता है।

प्रश्न 154: बाहरी साधन क्या है। जिससे मसीह अपनी मध्यस्थता के फायदे हमें देता है?

उत्तर : बाहरी और साधारण साधन, जिनसे मसीह अपनी मधयस्थता के फायदे हमें देता है। उसके धार्मिक अनुष्ठान/अध्यादेश है, विशेष कर वचन, संस्कार और प्रार्थना जो, सब चुने हुओं में उनके उद्धार के लिए प्रभावी होते हैं।

प्रश्न 155 : वचन किस प्रकार उद्धार के लिए प्रभावी होता है?

उत्तर : परमेश्वर की आत्मा वचन पड़ता है। परन्तु, पापी को नम्र, पापी समझने और प्रकाशन देने में, परमेश्वर के वचन का प्रचार प्रभावी होता है। जो उन्हे अपने से अलग कर यीशु मसीह में लाता है। और उन्हें मसीह की समानता में बनाता है, और उन्हें मसीह की इच्छा के आधीन करता है, उन्हे परीक्षा और भ्रष्टता के विरूद्ध शक्ति देता है। उन्हें अनुग्रह में बढ़ाता, हृदय में पवित्रता स्थापित करता और विश्वास से तसल्ली, उद्धार के लिए देता है।

प्रश्न 156 : क्या परमेश्वर का वचन सभी को पढ़ना चाहिए?

उत्तर : यद्यपि सभी को इस बात की अनुमति नहीं है, कि वे सबके सामने सभा में परमश्वेर का वचन पढ़े। फिर भी सभी लोगों को, इसे अपने आपके लिए और अपने परिवारों के साथ पढ़ना जरूरी है। जिसके लिए परमेश्वर के वचन को, मौलिक भाषा से सभी भाषा में अनुवादित होने की आवश्यकता है।

प्रश्न 157 : परमेश्वर के वचन को किस प्रकार पढ़ना चाहिए?

उत्तर : पवित्र शास्त्र को बड़े आदर और सम्मान के साथ पढ़ना चाहिए, इस दृढ़ता के साथ, कि वह परमेश्वर का वचन है और वही हम इस योग्य बनाता है, कि हम वचन को समझ सके, उसे जानने, विश्वास और परमेश्वर की इच्छा जो वचन में प्रगट है, की आज्ञा मानने की इच्छा के साथ, और उसके कार्यक्षेत्र का ध्यान के साथ मनन, लागू करने, और प्रार्थना के साथ पढ़ना चाहिए।

प्रश्न 158 : किसके द्वारा परमेश्वर का वचन प्रचार किया जाना चाहिए?

उत्तर : परमेश्वर के वचन का प्रचार, सिर्फ उनके द्वारा जो पर्याप्त इसके योग्य है और उचित रीति से इस कार्य के लिए, मान्यता प्राप्त किये और बुलाए गये हैं, किया जाना चाहिए।

प्रश्न 159 : परमेश्वर के वचन का किस प्रकार प्रचार करना है, उनके द्वारा जो इसके लिए बुलाए गये है?

उत्तर : जिन्हें वचन की सेवा में मेहनत के लिए बुलाया गया है। उन्हें सही उपदेश (सिद्धान्तों) का प्रचार, परिश्रम से समय और असमय करना चाहिए। साफ शब्दों में मनुष्य की बुद्धि के लुभावने शब्दों में नहीं, वरन आत्मा की सामर्थ और प्रकाशन में, विश्वास योग्यता से परमेश्वर की सारी समझ को बताते हुए, अपने आपको, सुनने वालों की जरूरत और योग्यता के स्थान पर रखना, परमेश्वर और लोगों की आत्मा से उत्साहित प्रेम के साथ, सच्चाई से उसकी महिमा और उनका परिवर्तन, बढ़ोत्तरी और उद्धार को बताते हुए प्रचार करना चाहिए।

प्रश्न 160 : जो वचन का प्रचार सुनते हैं, उनसे क्या उम्मीद की जाती है?

उत्तर : जो परमेश्वर के वचन का प्रचार सुनते है, उनसे ये उम्मीद की जाती है, कि वे इसके लिए प्रयास करके, तैयारी और प्रार्थना के साथ आए। वचन से जो वे सुनते है, उसकी जांच करे। सच्चाई को विश्वास, प्रेम, दीनता के साथ, दिमाग की तत्परता से, उसे परमेश्वर का वचन मानते हुए स्वीकार करे, मनन करते हुए इसे सम्मान दे, इसे हृदय में बसा ले और अपने जीवन में इसका फल दिखाए।

प्रश्न 161 : किस प्रकार संस्कार उद्धार के प्रभावी साधन बनते है?

उत्तर : संस्कार उद्धार के लिए प्रभावी माध्यम बनते है। इसलिए नहीं कि उनमें कोई सामर्थ है। अथवा इसका प्रबन्धन करने वाले की इच्छा से गुण निकलते है। परन्तु सिर्फ पवित्र आत्मा के कार्य करने से और मसीह की आशीष से, जिसने उन्हें नियुक्त किया है।

प्रश्न 162 : संस्कार क्या है?

उत्तर : संस्कार, मसीह द्वारा उसकी कलीसिया में प्रारम्भ किया हुआ पवित्र अनुष्ठान है। जो उसकी मध्यस्थता के लाभ, के चिन्ह, प्रमाणिकता को उनके लिए दर्शाता है, कि अनुग्रह की वाचा में विश्वास को मजबूत करे और बढ़ाए और अन्य अनुग्रह उनमें बढ़ाएं, उन्हें आज्ञाकारिता का दायित्व समझाए। उनके प्रेम और संगति को एक दूसरे के साथ खुशी प्रदान करे, और उन्हें जो अनुग्रह से बाहर है से अलग करें।

प्रश्न 163 : संस्कार के कौन से भाग (हिस्से) है?

उत्तर : संस्कार के दो भाग होते है। **पहला**-बाहरी चिन्ह, मसीह की नियुक्ति के अनुसार इस्तेमाल होता है। **दूसरा**-आन्तरिक और आत्मिक अनुग्रह, जो मतलब प्रगट करता है।

प्रश्न 164 : नये नियम में मसीह ने कितने संस्कार अपनी कलीसिया में प्रारम्भ किये है।

उत्तर : नये नियम में, मसीह ने अपनी कलीसिया में बपतिस्मा और प्रभुभोज मात्र दो संस्कार प्रारम्भ किये है।

प्रश्न 165 : बपतिस्मा क्या है

उत्तर : बपतिस्मा, नये नियम का संस्कार है। जिसमें मसीह ने, पानी से पिता और पुत्र और पवित्र आत्मा के नाम से सफाई ठहराई है, जो इस बात का चिन्ह और प्रमाण है, कि उन्हें उसने अपने में जोड़ लिया है। उसके खून से उनके पापों का पश्चाताप हुआ है, और आत्मा के द्वारा उनका नया जन्म हो गया है। उन्हें गोद लिया गया और अनन्त जीवन के लिए उनका पुनरूत्थान हुआ है। इसलिए बपतिस्मा लेने वालों को सदृश्य कलीसिया में प्रवेश मिलता और वे इस बात को सामूहिकता से अंगीकार करते हैं, कि वे पूर्णता प्रभु के है।

प्रश्न 166 : बपस्मिता किन्हें दिया जा सकता है?

उत्तर : बपस्मिता उन्हें नहीं दिया जाता, जो सदृश्य कलीसिया में नहीं है, और वायदे की वाचा से अन्जान है। जब तक वे अपने विश्वास और आज्ञाकारिता को यीशु के लिए अंगीकार नहीं करते। परन्तु, बच्चे जो ऐसे माता-पिता के जो यीशु में विश्वास को अंगीकार करते और उसकी आज्ञा मानते है, दोनो अथवा एक। ऐसे बच्चों को वाचा का हिस्सा मान कर बपतिस्मा दिया जाता है।

प्रश्न 167 : किस प्रकार हम अपने बपतिस्में को और बेहतर करते है?

उत्तर : बपतिस्में को बेहतर करने की जिम्मेदारी जरूरी है फिर इसे अनदेखा किया जाता है। इस जिम्मेदारी को पूरा करना, हमारा पूरे जीवन का काम है। विशेषकर परीक्षा के समय और जब यह दूसरों को दिया जाता है, और हम उपस्थित रहते है। हमें इसके स्वभाव की गम्भीरता और धन्यवाद के साथ और उस निष्कर्ष जिसके लिए मसीह ने इसे नियुक्त किया, सौभाग्य और लाभ और गारन्टी जो इससे मिलती है, और गम्भीर शपथ जो हमने ली है। हमारे इसमें नाकाम होने और बपतिस्में के अनुग्रह के विरुद्ध जानें और उसमें बने रहने से, हमें अपने पापमय अशुद्धि से दीन बनना है। और पापों की क्षमा के आश्वासन और अन्य सभी आशीषों की गारन्टी जो इस संस्कार में मिलती है, उनके आश्वासन में बढ़ना है। और मसीह की मृत्यु और पुनरुत्थान से शक्ति लेते हुए,

जिसमें हमने पाप को नाश और अनुग्रह को पाने के लिए बपतिस्मा लिया, और विश्वास में जीने के लिये, परिश्रम करना, और अपने परिवर्तन को धार्मिकता और पवित्रता में उन लोगों के समान, जिन्होंने अपने नाम मसीह को दे दिये, बनाए रखना। और जिस प्रकार हमने एक ही आत्मा से, एक शरीर में बपतिस्मा लिया है। भाइयों का प्रेम बनाए रखना है।

प्रश्न 168 : प्रभु भोज क्या है?

उत्तर : प्रभु भोज नये नियम का संस्कार है। जिसमें रोटी और दाखरस, देने और लेने से, जैसा यीशु मसीह ने नियुक्त किया है, हम उसकी मृत्यु को याद करते हैं, और वे जो उसके शरीर और खून से तृप्त होते और संगति करते हैं, कि अपनी आत्मिकता का पोषण औरअनुग्रह की बढ़ोत्तरी करें, उनकी संगति मसीह के साथ पक्की होती है, और वे परमेश्वर से जुड़े होने को नया और अपना धन्यवाद उसे प्रगट करते हैं, और एक ही अद्‌भुद शरीर के सदस्यों के समान, एक दूसरे से परिपक्व प्रेम और संगति प्रगट करते हैं।

प्रश्न 169 : मसीह ने किस प्रकार, प्रभु भोज के संस्कार में, रोटी और दाखरस को देने और लेने के लिए नियुक्त किया है?

उत्तर : प्रभु भोज के संस्कार के प्रबन्धन के लिए, मसीह ने वचन के सेवकों को नियुक्त किया है, कि वे वचन, धन्यवाद और प्रार्थना द्वारा रोटी और दाखरस को सामान्य इस्तेमाल से अलग करें, और रोटी लेकर तोड़ें और दोनों रोटी और दाखरस, इसमें शामिल होने वालों को दें। शामिल होने वाले उसी प्रकार धन्यवाद, प्रार्थना से, यीशु मसीह का शरीर, जो तोड़ा गया और उनके लिए दिया गया और उसका खून उनके लिए बहा, धन्यवाद के साथ, याद करते हुए, रोटी को लें और खाएं और दाखरस को पिएं।

प्रश्न 170 : वे जो सच्चाई से प्रभु भोज में शामिल होते हैं, किस प्रकार मसीह के शरीर और लहू से पोषित होते हैं?

उत्तर : मसीह का शरीर और खून, शारीरिक और सांसारिक रीति से प्रभु भोज की रोटी और दाखरस में और इसके साथ और आधीनता में, उपस्थित और प्रस्तुत नहीं होता, फिर भी इसे लेने वाले के, विश्वास से आत्मिक रीति से, यह उपस्थित होता है, और किसी भी तरह तत्व और उनके बाहरी गुणों से सच्चाई और वास्तविकता में कम नहीं होता है, इसलिए जो सच्चाई से प्रभु भोज में शामिल होते हैं, मसीह के शरीर और लहू से, शारीरिक और सांसारिक रीति से नहीं, वरन् आत्मिक रीति से पोषित होते हैं। जब वे विश्वास से क्रूसित मसीह को और उसकी मृत्यु के फायदे को, स्वीकारते और अपनाते हैं, वे

सत्यता और वास्तव में पोषित होते हैं।

प्रश्न 171 : वे जो प्रभु भोज के संस्कार को प्राप्त करते हैं, उन्हें इसे लेने से पहले किस प्रकार अपने आपको, इसे लेने के लिए तैयार करना होता है?

उत्तर : वे जो प्रभु भोज के संस्कार को प्राप्त करते हैं, इसे लेने आने से पहले, उन्हें अपने आपको कि वे यीशु मसीह में हैं, अपने पाप और इच्छाएं, अपने ज्ञान, विश्वास, पश्चाताप की सच्चाई को, परमेश्वर और भाईयों के प्रति प्रेम, सभी मनुष्य के लिए भलाई, उनको क्षमा जिन्होंने उनके विरुद्ध गलती की है, मसीह के लिए अपनी चाहत और अपनी नई आज्ञाकारिता को, जांचते हुए तैयार करें और गम्भीर मनन और प्रार्थना से, इन अनुग्रहों का नया करते हुए उन पर अमल करें।

प्रश्न 172 : क्या वह, जो स्वयं का, मसीह में होना और अपनी तैयारी के विषय में शक रखता है, प्रभु भोज में शामिल हो सकता है?

उत्तर : वह, जो अपने को मसीह में होने और अपनी तैयारी के विषय में शक (सन्देह) करता है, हो सकता है, मसीह में सच्चा और सच्ची रुचि रखता है। यद्यपि वह अभी इसके प्रति आश्वस्त नहीं है, तो वे परमेश्वर की दृष्टि में, यदि वह उचित रीति से, प्रभु भोज की चाहत से प्रभावित है, और मसीह में होने की सच्ची इच्छा रखता है और अपने पापों से अलग होना चाहता है, तो (क्योंकि वायदा किया गया है और यह संस्कार कमजोर और सन्देह करने वाले विश्वासी को सहारा देता है) उसे अपने अविश्वास के लिए खेद प्रकट करना है, और ऐसा करते हुए वह प्रभु भोज ले सकता है, और उसे लेना चाहिए, ताकि वह और सामर्थ पाकर, विश्वास में दृढ़ हो जाए।

प्रश्न 173 : क्या, कोई भी जो विश्वास का अंगीकार करता है और प्रभु भोज लेना चाहता है, उसे प्रभु भोज से अलग रखा जा सकता है?

उत्तर : ऐसे लोग जो अनजान हैं और धोखा देते हैं अपने विश्वास के अंगीकार से मेल नहीं खाते (अनुसार नहीं चलते) और प्रभु भोज में शामिल होना चाहते हैं, उन्हें उस अधिकार से, जो मसीह ने कलीसिया को दिया है, प्रभु भोज नहीं देना चाहिए, (नहीं दिया जा सकता) जब तक कि वे चेतावनी, सुझाव स्वीकार नहीं करते और अपने नये जीवन को प्रगट नहीं करते।

प्रश्न 174 : वे जो प्रभु भोज के संस्कार के प्रबन्धन के समय इसे प्राप्त करते हैं, उनके लिए क्या बातें आवश्यक हैं?

उत्तर : वे जो प्रभु भोज के समय इसे प्राप्त करते हैं, उनके लिए जरूरी है, कि इसके प्रबंधन के समय, वे पूर्ण पवित्र सम्मान और ध्यान के साथ, परमेश्वर के इस

अनुष्ठान में शांत रहें, सावधानी से संस्कार के तत्व और क्रिया को मान्यता दें, ध्यान रखते हुए प्रभु के शरीर को समझें और उसकी मृत्यु और दु:खों पर मनन करें, और उससे अपने अनुग्रह को, स्वयं में प्रभावी कार्य करने दें, अपने आप को परखें और पाप की क्षमा मांगे, मसीह की सच्ची, भूख और प्यास में विश्वास से, उसमें तृप्त हों, परिपूर्णता प्राप्त करें, उसकी विशेषता में भरोसा रखें, उसके प्रेम में आनन्दित हों, उसके अनुग्रह के लिए धन्यवादी हों, अपनी वाचा को, परमेश्वर के साथ और संतों के प्रति, अपने प्रेम को फिर से नया करें।

प्रश्न 175 : प्रभु भोज के संस्कार को लेने के पश्चात् मसीहियों के क्या कर्तव्य हैं?

उत्तर : प्रभु भोज के संस्कार को लेने के पश्चात् मसीहियों के कर्तव्य हैं, कि वे गम्भीरता से सोचें, कि वहाँ उन्होंने, कैसा और कितनी सफलता से अपने साथ व्यवहार किया, यदि वे अपने आप में उत्साह और तसल्ली पाते हैं, तो इसके लिए परमेश्वर का धन्यवाद दें और इसे निरंतर मांगते रहें, वापस गिरने के प्रति सावधान रहें, अपनी शपथ को पूरी करें और अपने आप को इसमें निरंतर शामिल करने के लिए उत्साहित करें, लेकिन यदि उन्हें कोई फायदा नहीं हुआ है, तो वे अपनी तैयारी और संस्कार में शामिल होने की समीक्षा करें, दोनों बातों में यदि वे अपने आपको, परमेश्वर के और अपने विवेक में सही पाते हैं, तब प्रतिफल की प्रतीक्षा करें, जो समय पर उन्हें प्राप्त होगा, परंतु यदि वे अपने आपको, किसी भी बात में असफल पाते हैं, तो उन्हें अपने आपको दीन करना है और इसमें, बाद में ज्यादा सावधानी और मेहनत करके शामिल होना है।

प्रश्न 176 : किन बातों में बपतिस्मे और प्रभुभोज के संस्कार, एक समान हैं?

उत्तर : बपतिस्मे और प्रभु भोज का संस्कार एक समान है, जिसमें दोनों का सृजनकर्ता परमेश्वर है। दोनों का आत्मिक हिस्सा मसीह और उसके फायदे हैं। दोनों एक ही वाचा के गारन्टी है। दोनों सुसमाचार के सेवकों द्वारा दिये जाते हैं और यीशु के दोबारा आगमन तक कलीसिया में बने रहेंगे।

प्रश्न 177 : किन बातों में बपतिस्मे और प्रभु भोज का संस्कार, एक दूसरे से अलग है?

उत्तर : बपतिस्मे और प्रभु भोज में भिन्नता है, जिसमें बपतिस्मा, एक ही बार हमारे नये जीवन और मसीह में जुड़ने के, चिन्ह और प्रमाण के रूप में जाता है। जबकि, प्रभु भोज के संस्कार को रोटी और दाखरस में, मसीह को, हमारी आत्मा के आत्मिक पोषण और उसमें हमारी निरंतर बढ़ोत्तरी को प्रस्तुत और

प्रगट करने के लिए, सिर्फ उन्हें जो अपने आप को परखने योग्य है, बार-बार लिया/दिया जाता है।

प्रश्न 178 : प्रार्थना क्या है?

उत्तर : प्रार्थना, पवित्र आत्मा की सहायता, से मसीह के नाम में, अपनी इच्छाओं को परमेश्वर के सामने अपने पापों को अंगीकार करते हुए, और उसकी करुणा को मानते हुए धन्यवाद के साथ प्रस्तुत करना है।

प्रश्न 179 : क्या हमें सिर्फ परमेश्वर से प्रार्थना करनी है?

उत्तर : सिर्फ (एकमात्र) परमेश्वर ही हृदय को जानता, विनती को सुनता, पाप क्षमा करता और सभी की इच्छा पूरी करता है, और सिर्फ उस पर ही विश्वास और धार्मिक आराधना में उसकी आराधना करनी है। प्रार्थना, आराधना का महत्वपूर्ण हिस्सा है। इसलिए इसे सभी के द्वारा, परमेश्वर से ही करनी है अन्य से नहीं।

प्रश्न 180 : मसीह के नाम से प्रार्थना करना क्या है?

उत्तर : मसीह के नाम से प्रार्थना करना, उसकी आज्ञा को मानना और उसके वायदे में भरोसा है, कि उसके बदले करुणा मांगे, सिर्फ उसके नाम को लेना ही नहीं, वरन् अपने उत्साह को प्रार्थना के लिए बढ़ाना और अपने साहस, शक्ति और प्रार्थना की स्वीकार्यता की आशा को, मसीह और उसकी मध्यस्थता से, उत्साहित करना है।

प्रश्न 181 : हमें मसीह के नाम से क्यों प्रार्थना करनी है?

उत्तर : पापी मनुष्य, और उसकी परमेश्वर से दूरी बहुत ज्यादा है, कि हम बिना बिचवईए के उसकी उपस्थिति तक नहीं पहुँच सकते और उस महिमा के कार्य के लिए मसीह के अतिरिक्त कोई भी नियुक्त नहीं किया गया, न ही इस योग्य है। इसलिए हमें मसीह के नाम से ही प्रार्थना करनी है, अन्य के नहीं।

प्रश्न 182 : आत्मा किस प्रकार हमारी प्रार्थना करने में मदद करती है?

उत्तर : हमें नहीं मालूम, कि हमें किस प्रकार प्रार्थना करनी चाहिए, हमें किसके लिए, क्या और कैसे प्रार्थना करनी है। आत्मा हमें, इस समझ के योग्य बनाते हुए, हमारी कमजोरी में, हमारी मदद करती है, और हमारे हृदय में कार्य और उत्साह को (यद्यपि सभी में नहीं, न हमेशा, न एक समान) बढ़ाते हुए सही प्रार्थना के लिए जो जरूरी है, उस समझ, चाहत और अनुग्रह को प्रदान करती है।

प्रश्न 183 : हमें किनके लिए प्रार्थना करनी है?

उत्तर : हमें पूरी कलीसिया, जो पृथ्वी पर है, न्यायाधीश, सेवक, अपने लिए, अपने भाइयों के लिए, अपने दुश्मनों और सभी जीवित मनुष्य और जो आने वाले हैं, के लिये प्रार्थना करनी है। परंतु मृतकों के लिए नहीं, न ही उनके लिए जिन्होंने मृत्यु का पाप किया है।

प्रश्न 184 : हमें किन चीजों के लिए प्रार्थना करनी है?

उत्तर : हमें सभी बातों के लिए, जिससे परमेश्वर की महिमा होती है, कलीसिया के कामों, अपने और दूसरों की भलाई के लिए प्रार्थना करनी चाहिए, परंतु जो अनुचित है, उसके लिए नहीं।

प्रश्न 185 : हमें किस प्रकार प्रार्थना करनी चाहिए?

उत्तर : हमें परमेश्वर की महिमा को समझते हुए, और अपनी अयोग्यता, जरूरत और पापों को जानते हुए, पश्चाताप, धन्यवाद और बड़े हृदय से, समझ, विश्वास, सच्चाई, उत्साह, प्रेम और धैर्य से उसकी प्रतीक्षा करते हुए, उसकी इच्छा में दीनता से, समर्पित होकर प्रार्थना करनी चाहिए।

प्रश्न 186 : परमेश्वर ने प्रार्थना के कर्तव्य में बढ़ने के लिए हमें कौन से नियम दिए हैं?

उत्तर : परमेश्वर का पूरा वचन, हमें प्रार्थना के कर्तव्य में अगुआई करता है। परन्तु प्रार्थना के विशेष नियम, हमें अपने उद्धारकर्ता की प्रार्थना, जो उसने अपने शिष्यों को सिखायी में दिये है। जिसे सामान्यतः प्रभु की प्रार्थना कहा जाता है।

प्रश्न 187 : प्रभु की प्रार्थना को कैसे इस्तेमाल करना चाहिए?

उत्तर : प्रभु की प्रार्थना, सिर्फ एक निर्देशित करने वाला नमूना ही नहीं है, जिसके आधार पर हम अन्य प्रार्थना करते है। परन्तु इसे प्रार्थना की तरह इस्तेमाल करना है। इसलिए इसे समझ, विश्वास, सम्मान, और अन्य अनुग्रह, जो प्रार्थना के कर्तव्य को सही प्रकार से पूरा करने के लिए जरूरी है, के साथ करना चाहिए।

प्रश्न 188 : प्रभु की प्रार्थना कितने हिस्सों को लेकर बनती है? अथवा प्रभु की प्रार्थना के कितने भाग है?

उत्तर : प्रभु की प्रार्थना के तीन भाग है। जो प्रस्तावना, विनती और निष्कर्ष है।

प्रश्न 189 : प्रभु की प्रार्थना में, प्रस्तावना हमें क्या सिखाता है?

उत्तर : प्रभु की प्रार्थना में प्रस्तावना (भूमिका) इन शब्दों में व्यक्त है **''हे हमारे पिता तू जो स्वर्ग में है''** हमें सिखाता है, कि जब हम प्रार्थना करें, उसके पिता समान की भलाई के विश्वास की दृढता, और हमारी उनमें रूचि के साथ, आदर और अन्य बच्चे के गुणों, स्वर्गीय लगाव, और उसकी प्रभुत्व की

सामर्थ की समझ, महिमा और अनुग्रहकारी विनीत भाव के साथ परमेश्वर के पास जाए, और दूसरों के लिये भी प्रार्थना करें।

प्रश्न 190 : हम पहली विनती में क्या प्रार्थना करते है?

उत्तर : पहली विनती (जो **''तेरा नाम पवित्र माना जाए''**) में हम अपने और सभी मनुष्य की अयोग्यता, जो हममें हैं, अंगीकार करते हुए प्रार्थना करते हैं, कि परमेश्वर को सच्चा सम्मान दें, कि परमेश्वर अपने अनुग्रह से, हमें और सभी को, इस योग्य बनाएं और समझ दें, कि हम उसके ऊँचे सम्मान महिमा, उसके शीर्षक, गुण, अध्यादेश, वचन, कार्य और अन्य सब कुछ जिससे वह अपने आप को प्रगट करता है। जाने और उसे स्वीकार करें, और उसे विचार, शब्दों, कार्यों से महिमा दे, कि वह नास्तिकता, अज्ञान, मूर्तिपूजा, घृणित बातें और सबकुछ जिससे उसका अनादर होता है, उसे रोकें और अलग करें, और वह उसकी प्रभुता और सुरक्षा से, सभी बातों को अपनी महिमा के लिए निर्देशित और ठीक करें।

प्रश्न 191 : हम दूसरी विनती में क्या प्रार्थना करते है?

उत्तर : दूसरी विनती (जो **''तेरा राज्य आए है''**) में, हम स्वयं और सभी मनुष्य जो स्वभाव से पाप और शैतान के प्रभुत्व के आधीन हैं, इस बात को स्वीकार करते हैं, और हम प्रार्थना करते है, कि पाप और शैतान का राज्य नाश किया जाए, सुसमाचार पूरे संसार में फैल जाए, यहूदी बुलाए जाए और अन्य जाति से लोग आए, कलीसिया सभी सुसमाचार के सेवकों से सुसज्जित हो, भ्रष्टता से पवित्र की जाए, और नागरिक न्यायधीशों का समर्थन और देखरेख प्राप्त हो, मसीह के अध्यादेश, नियम शुद्धता से आगे बढ़ें और जो अभी भी पाप में है उनके बदलने के लिए प्रभावी ठहरे, और जो पहले से मसीह में हैं। उन्हें निश्चयता, तसल्ली और बढ़ोत्तरी प्रदान करें, कि मसीह यहाँ (इस दुनिया) में हमारे हृदय पर राज्य करें, और हम हमेशा उसके साथ राज्य करें, और वह अपने सामर्थ के राज्य को, पूरे संसार में क्रियाविन्तित करने में आनन्दित हो, और इस उद्देश्य के लिए अति सहायक हो।

प्रश्न 192 : हम तीसरी विनती में किस बात के लिए प्रार्थना करते हैं?

उत्तर : तीसरी विनती जो है, **''तेरी इच्छा जैसे स्वर्ग में पूरी होती है पृथ्वी पर भी हो''** में हम स्वीकारते हैं कि स्वभाव से हम और सभी मनुष्य, सिर्फ उसकी इच्छा जानने और करने में अयोग्य और अनिच्छा ही नहीं रखते, वरन् उसके वचन के विरुद्ध विद्रोह करते हैं, और उसकी देखभाल के विरुद्ध कुड़कुड़ाते और असंतुष्ट होते हैं, और शैतान और शरीर की इच्छा करने के लिए तत्पर रहते हैं। इन बातों को मानते हुए हम प्रार्थना करते हैं, कि परमेश्वर हमसे और अन्य सभी से-पूरा अन्धापन, कमजोरी, अयोग्यता, हृदय की भ्रष्टता अपनी

आत्मा द्वारा, हमसे दूर करें, और अपने अनुग्रह से हमें, दीनता, आनन्द, विश्वास, योग्यता, परिश्रमी, उत्साही, सच्चा और निरन्तरता के साथ इस योग्य बनाएं कि हम उसकी इच्छा जानें, पूरा करें और सब बातों में उसकी इच्छा के आधीन हो जाए, जैसा स्वर्ग में स्वर्गदूत करते हैं।

प्रश्न 193 : हम चौथी विनती में क्या प्रार्थना करते हैं?

उत्तर : चौथी विनती में जो **''हमारे दिन भर की रोटी आज हमें दे''** है हम स्वीकार करते हैं, कि आदम में और अपने पापों से हमने इस जीवन में बाहरी आशीषों के अधिकार को समाप्त कर दिया है, और उचित रीति से परमेश्वर ने उन्हें हमसे अलग किया है, और उन्हें हमारे लिए श्रापित किया है, और वे हमें संभालने योग्य नहीं हैं न ही हम उनके हकदार हैं, न ही हम अपने परिश्रम से उन्हें प्राप्त कर सकते हैं। परंतु हम उन्हें उचित रीति से पाने की चाहत और इस्तेमाल के लिए तत्पर रहते हैं, ये मानते हुए हम, अपने और दूसरों के लिए प्रार्थना करते हैं और परमेश्वर की सुरक्षा (कृपादृष्टि) की प्रतीक्षा, दिन प्रतिदिन उचित संसाधन के इस्तेमाल के लिए उस पर आश्रित होते हैं, कि उसके मुफ्त दान और उसके पिता की आत्मा में उनका, पर्याप्त भाग का आनन्द उठाएं। और वह हमें निरन्तर हमारे पवित्र और आराम के, इस्तेमाल के लिए उनको आशीषित करे, और हमें उनमें संतुष्टि हो, और हम उन सभी चीजों से अलग हो जो हमारे अस्थायी मदद और आराम के विरुद्ध है।

प्रश्न 194 : पांचवी विनती में हम किस बात के लिए प्रार्थना करते हैं?

उत्तर : पांचवी विनती में (जो **''हमारे अपराधों को क्षमा कर जैसे हम अपने अपराधियों को क्षमता करते हैं''**) हम स्वीकार करते हैं, कि हम और अन्य सभी मौलिक और वास्तविक पाप, दोनों के लिए दोषी हैं, जिससे हम परमेश्वर के न्याय के दोषी हैं और न हम न अन्य कोई उस दोष के लिए परमेश्वर को थोड़ा भी संतुष्ट कर सकते हैं। इसलिए हम अपने और दूसरों के लिए प्रार्थना करते हैं, कि परमेश्वर अपने मुफ्त अनुग्रह, मसीह की आज्ञाकारिता और संतुष्टि जिसे विश्वास से समझकर अपनाया जाता है, हमें पाप के दण्ड और दोष दोनों से स्वतंत्र करेगा, और हमें अपने प्रेम का पात्र बनाएगा, और निरन्तर हमें अपना अनुग्रह देगा, हमें रोज की नाकामियों से क्षमा करेगा और रोजाना हमारे क्षमा के आश्वासन को बढ़ाते हुए, हमें शांति और आनन्द से भरेगा, हमें ये सब मांगने का साहस, उत्साह और उम्मीद होती है। जब हम स्वयं में यह गवाही देते हैं, कि हमने हृदय से दूसरों को उनके अपराध के लिए क्षमा किया है।

प्रश्न 195 : हम छठी विनती में क्या प्रार्थना करते हैं?

उत्तर : छठी विनती में (**''और हमें परीक्षा में न पड़ने दे, वरन बुराई से बचा''**) हम यह अंगीकार करते हैं, कि अति बुद्धिमानी, धर्मी और अनुग्रहकारी परमेश्वर, पवित्र और धर्मी उद्देश्य के लिए ऐसा होने दें, कि शायद हम परीक्षा में पड़कर, विफल होकर इसमें कुछ समय के लिए बन्दी हो जाए। शैतान, संसार और शरीर, सामर्थ से इस ताक में है कि, हमें अलग कर अपने जाल में फँसा लें और हम अपने पापों की क्षमा पाने के बाद भी, उस भ्रष्टता और कमजोरी के कारण सिर्फ परीक्षा में नहीं फँसते वरन् अपने आपको परीक्षा में पड़ने देते हैं। परंतु हम परीक्षा से संघर्ष नहीं करते न ही ऐसी योग्यता रखते हैं, कि हम उनमें से निकल जाएं, जिससे हम उनके सामर्थ की आधीनता में फँस जाते हैं। इसलिए हम प्रार्थना करते हैं, कि परमेश्वर संसार और जो कुछ इसमें है उन पर शासन (प्रभुता) करे, शरीर (पाप) पर नियंत्रण, शैतान को बाँधे, सब चीजों को व्यवस्थित, अनुग्रह के सब संसाधन को दें और आशीषित करें और उनके इस्तेमाल में जागृत, उत्साहित करें, कि हम और सभी लोग उसकी कृपादृष्टि से पाप की परीक्षा में न पड़ें, और यदि परीक्षा होती है, तो उसकी आत्मा से, हमें सामर्थ मिले और परीक्षा की घड़ी में हम स्थिर रह सकें, और यदि परीक्षा में गिरते हैं तो वापस खड़े हो सकें, इससे मुक्त हो, और पवित्र और बेहतर हो, कि हमारा पवित्रीकरण और उद्धार सिद्ध हो जाए, और शैतान हमारे पैरों तले कुचला जाए, और हम हमेशा के लिए पाप, परीक्षा और सभी बुराई से मुक्त हो जाए।

प्रश्न 196 : प्रभु की प्रार्थना का निष्कर्ष (आखिरी भाग) क्या सिखाता है?

उत्तर : प्रभु की प्रार्थना का निष्कर्ष (आखिरी भाग) है (**''क्योंकि राज्य, सामर्थ और महिमा तेरी ही है-आमीन''**) सिखाता है। हम अपनी विनती इस तर्क के साथ करें, कि हममें अथवा अन्य किसी प्राणी में कोई भी योग्यता नहीं है। परंतु परमेश्वर ही योग्य है, और अपनी प्रार्थना में हम परमेश्वर को अनन्तकालीन प्रभुता का स्वामी, सर्वसामर्थी और महिमा में परिपूर्ण मानते हुए उसकी स्तुति करें, जिसके अनुरूप वह इस योग्य है और हमारी मदद करता है। ताकि हम, विश्वास में वह करेगा, जानकर, साहस से भर कर, उससे मांगे, और उस पर भरोसा करें, कि वह हमारी विनती पूरी करेगा, और अपनी इस इच्छा का प्रमाण और आश्वासन देने के लिए कहते हैं, आमीन।

●

संक्षिप्त प्रश्नावली

The Shorter Catechism

प्रश्न 1 : मनुष्य का मुख्य (प्रमुख) उद्देश्य क्या है?

उत्तर : मनुष्य जीवन का मुख्य उद्देश्य, युगानयुग परमेश्वर की महिमा करना और उसमें आनन्दित रहना है।

प्रश्न 2 : हम उसकी महिमा करे व उसमें आनन्दित कैसे रहें, इसके लिए परमेश्वर ने हमें निर्देशित करने के लिए, कौन सा नियम दिया है?

उत्तर : परमेश्वर का वचन, जो पुराने और नये नियम के पवित्र शास्त्र में निहित है ही एकमात्र नियम है, जो हमें सिखाता (निर्देशित करता) है कि हम कैसे उसकी महिमा करें और उसमें आनन्दित रहें।

प्रश्न 3 : पवित्र शास्त्र हमें मुख्यत: क्या सिखाता है?

उत्तर : पवित्र शास्त्र मुख्यत: सिखाता है, कि मनुष्य, परमेश्वर के बारे में क्या विश्वास करे और परमेश्वर मनुष्य से किन कर्तव्यों की अपेक्षा करता है?

प्रश्न 4 : परमेश्वर क्या है?

उत्तर : परमेश्वर, आत्मा, असीमित, अनन्तकालीन है तथा अपने स्वरूप, बुद्धि, शक्ति, पवित्रता, न्याय, भलाई और सच्चाई में कभी न बदलने वाला, अर्थात अटल है।

प्रश्न 5 : क्या एक से अधिक परमेश्वर हैं?

उत्तर : नहीं! केवल एकमात्र एक ही जीवित और सच्चा परमेश्वर है।

प्रश्न 6 : परमेश्वरत्व में कितने व्यक्ति हैं?

उत्तर : परमेश्वरत्व में तीन व्यक्ति पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा है और ये तीनों एक ही परमेश्वर हैं, तत्व में एक और सामर्थ व महिमा में समान है।

प्रश्न 7 : परमेश्वर के क्या संकल्प (निर्णय) हैं?

उत्तर : परेश्वर के संकल्प, उसकी इच्छा की सम्मति के अनुसार उसके अनन्त उद्देश्य हैं, जिनके द्वारा उसने हर एक बात को जो होती है अथवा होनी है, को अपनी महिमा के लिये पहले से ठहराया है।

प्रश्न 8 : परमेश्वर अपने संकल्पों (निर्णयों) को कैसे पूरा करता है?

उत्तर : परमेश्वर अपने संकल्पों को, सृष्टि रचने और उसकी देख-रेख करने के द्वारा पूरा करता है।

प्रश्न 9 : संसार की सृष्टि कैसे हुई ?

उत्तर : संसार की सृष्टि परमेश्वर के सामर्थी वचन के द्वारा, बिना किसी वस्तु के छः दिन में, बनाने के द्वारा हुई और यह अति सुन्दर थी।

प्रश्न 10 : परमेश्वर ने कैसे मनुष्य की सृष्टि की ?

उत्तर : परेश्वर ने मनुष्य को नर और नारी करके ज्ञान, धार्मिकता और पवित्रता में, अपनी समानता में बनाया और उन्हें सारी सृष्टि पर प्रभुता (अधिकार) दिया।

प्रश्न 11 : परमेश्वर के देख-रेख के प्रबन्धन के कार्य क्या हैं?

उत्तर : परमेश्वर के प्रबन्धन के कार्य, उसकी अत्यन्त पवित्रता, बुद्धिमता और सामर्थ से सारी सृष्टि व उसके कार्यों को सम्भालना व उन पर प्रभुता करना है।

प्रश्न 12 : परमेश्वर ने मनुष्य की सृष्टिगत अवस्था में, उसके लिये कौन सी विशेष विधियाँ ठहरायी?

उत्तर : जब परमेश्वर ने मनुष्य की सृष्टि की, तो उसके साथ पूर्ण आज्ञाकारिता की शर्त पर जीवन की वाचा बान्धी, और उसको भले और बुरे के ज्ञान के वृक्ष से खाने को मना किया, जिसको न मानने का दण्ड मृत्यु ठहराया।

प्रश्न 13 : क्या हमारे पहले माता पिता उस अवस्था में बने रहे, जिसमें उनकी सृष्टि हुई थी?

उत्तर : हमारे पहले माता-पिता ने अपनी स्वतंत्र इच्छा (जो उन्हें दी गयी थी) से, परमेश्वर के विरुद्ध पाप करके, उस अवस्था से गिर गये, जिसमें उनकी सृष्टि हुई थी।

प्रश्न 14 : पाप क्या है?

उत्तर : परमेश्वर की व्यवस्था को पूरा न मानना अथवा तोड़ना दोनों बातें पाप हैं।

प्रश्न 15 : वह पाप क्या था, जिसके कारण हमारे पहले माता-पिता उस अवस्था से जिसमें वे बनाये गये थे, गिर गये?

उत्तर : वह पाप जिसके कारण हमारे पहले माता-पिता उस अवस्था से जिसमें वे बनाये गये थे गिर गये, उस फल का खाना था, जो परमेश्वर ने मना किया था।

प्रश्न 16 : क्या आदम के पहले पाप में पूर्ण मानव जाति पतित हो गयी?

उत्तर : हाँ! क्योंकि जो वाचा आदम के साथ बाँधी गयी थी, वह सिर्फ उसके लिये नहीं थी, वरन उसके वंशजों के लिये भी थी और सभी मानव जाति आदम की संतान (वंशज) है, उन्होंने आदम के साथ उसके पहले पाप में पाप किया और उसके साथ पतित हो गये।

प्रश्न 17 : पतन मनुष्य को किस अवस्था में ले आया?

उत्तर : पतन मनुष्य को, पाप और कष्ट की अवस्था में ले आया।

प्रश्न 18 : पाप की जिस अवस्था में मनुष्य पतित हुआ, उसमें उसका पापी होना किन बातों में निहित है?

उत्तर : पाप की वह अवस्था, जिसमे मनुष्य (मानव) पतित हुआ, वह आदम के पहले पाप का दोष, मौलिक धार्मिकता की कमी और उसके सम्पूर्ण स्वभाव का भ्रष्ट होना है, जिसे साधारणतः मौलिक पाप कहा जाता है तथा सभी वास्तविक पाप जो इससे निकलते हैं, में निहित है।

प्रश्न 19 : कष्ट की वह अवस्था जिसमें मनुष्य (मानव) पतित हुआ, क्या है?

उत्तर : समस्त मानव जाति, अपने पतन के कारण परमेश्वर की संगति से दूर तथा उसके क्रोध और श्राप की भागीदार बन गयी और इस कारण इस जीवन के सारे कष्टों, मृत्यु और अनन्तकाल की नरक की यातना के आधीन हो गयी।

प्रश्न 20 : क्या परमेश्वर ने मनुष्य को पाप और दुःख की अवस्था में नाश होने के लिए छोड़ दिया?

उत्तर : परमेश्वर ने अपनी भली इच्छा से, कुछ लोगों को अनन्तकाल से अनन्त जीवन के लिये चुन लिया और उन्हें पाप और दुःख की अवस्था से छुड़ाने तथा एक उद्धारकर्ता द्वारा, उद्धार की अवस्था में लाने के लिये, उनके साथ अनुग्रह की वाचा स्थापित की।

प्रश्न 21 : परमेश्वर के चुने हुओ का उद्धारकर्ता कौन है?

उत्तर : परमेश्वर के चुने हुओ का एकमात्र उद्धारकर्ता प्रभु यीशु मसीह हैं। जो परमेश्वर का अनन्तकालीन पुत्र होते हुए भी, मनुष्य बना और जो परमेश्वर और मनुष्य दो अलग स्वभाव में, एक ही व्यक्ति था, और निरंतर है, और हमेशा रहेगा।

प्रश्न 22 : मसीह परमेश्वर का पुत्र होते हुए कैसे इन्सान (मनुष्य) बना?

उत्तर : मसीह, परमेश्वर के पुत्र ने एक सच्चा शरीर और तार्किक आत्मा को धारण किया, पवित्र आत्मा की सामर्थ से कुंवारी मरियम की कोख में गर्भ धारण और उससे जन्म लेकर मनुष्य (इन्सान) बना, फिर भी पापरहित है।

प्रश्न 23 : हमारा उद्धारकर्ता होकर मसीह कौन से पदों को क्रियान्वित करता है?

उत्तर : मसीह हमारा उद्धारकर्ता, अपनी दीनता और प्रतिष्ठा (गौरव) दोनों ही अवस्थाओं में, एक भविष्यद्वक्ता (नबी), एक याजक और एक राजा के पदों को कार्यान्वित करता है।

प्रश्न 24 : मसीह एक नबी के पद के कार्य को कैसे पूरा करता है?

उत्तर : मसीह अपने वचन और आत्मा के द्वारा, हमारे उद्धार के लिए परमेश्वर की इच्छा हम पर प्रगट करने के द्वारा, एक नबी के पद के कार्य को पूरा करता है।

प्रश्न 25 : मसीह कैसे एक याजक के पद के कार्य को पूरा करता है?

उत्तर : मसीह परमेश्वर के न्याय की संतुष्टि के लिए, अपने आपको बलिदान करके, एक बार प्रस्तुत करने, और हमारा परमेश्वर से मेल मिलाप करने तथा हमारे लिये निरन्तर विनती करने के द्वारा, एक याजक के कार्य को पूरा करता है।

प्रश्न 26 : मसीह, कैसे एक राजा के पद के कार्य को क्रियान्वित करता है ?

उत्तर : मसीह हमें अपने आधीन करके, हम पर प्रभुता और हमारी रक्षा करके, और हमारे और अपने सभी दुश्मनों को नियंत्रण में रख, उन पर विजय प्राप्त करने के द्वारा, एक राजा के पद के कार्य को क्रियान्वित करता है।

प्रश्न 27 : मसीह की दीनता किन बातों (कार्यों) में प्रकट होती है?

उत्तर : मसीह की दीनता, उसके जन्म लेने और व्यवस्था की आधीनता में आने, इस जीवन के कष्टों तथा परमेश्वर के क्रोध को सहने और क्रस की शापित मृत्यु, दफनाए जाने और कुछ समय के लिये मृत्यु की आधीनता में रहने में, प्रकट होती है।

प्रश्न 28 : मसीह की प्रतिष्ठा किन बातों (कार्यों) में प्रकट होती है?

उत्तर : मसीह की प्रतिष्ठा, उसके मृतको में से तीसरे दिन जी उठने, स्वर्ग में ऊपर जाने, पिता परमेश्वर के दाहिने हाथ बैठने और अन्तिम दिन, संसार के न्याय करने के लिये आने में, प्रकट होती है।

प्रश्न 29 : मसीह द्वारा खरीदे गये छुटकारे में हम कैसे शामिल होते हैं?

उत्तर : हम मसीह द्वारा खरीदे गये छुटकारे में, पवित्र आत्मा द्वारा इसको प्रभावशाली ढंग से अपने में, लागू करने से, शामिल होते हैं।

प्रश्न 30 : पवित्र आत्मा मसीह द्वारा खरीदे गये छुटकारे को हम में कैसे लागू करता है?

उत्तर : पवित्र आत्मा हममें विश्वास पैदा करता है, जिससे हमारी प्रभावी बुलाहट में हमें मसीह से जोड़ता है, इस प्रकार वह मसीह द्वारा खरीदे छुटकारे को हम में, लागू करता है।

प्रश्न 31 : सफल (प्रभावी) बुलाहट क्या है?

उत्तर : सफल बुलाहट परमेश्वर की आत्मा का कार्य है, जिससे वह हमें हमारे पाप और दु:खों को एहसास कराता है, हमारे मन को मसीह के ज्ञान में प्रकाशित करता और हमारी इच्छा का नया करता, तथा वह हमें मसीह को जो हमें सुसमाचार में मुफ्त दिया गया है, को अपनाने के लिये प्रोत्साहन व योग्यता

प्रदान करता है।

प्रश्न 32 : वे जो सफलता से बुलाये गये हैं, इस जीवन में वे क्या लाभ प्राप्त करते हैं?

उत्तर : वे जो सफलता से बुलाये गये हैं, इस जीवन में न्यायीकरण अथवा निर्दोषीकरण, लेपालकपन और पवित्रीकरण और अन्य कई लाभ जो इस जीवन में इनके साथ अथवा इनसे निकलते हैं प्राप्त करते हैं।

प्रश्न 33 : न्यायीकरण अथवा निर्दोषीकरण क्या है?

उत्तर : निर्दोषीकरण परमेश्वर के मुफ्त अनुग्रह का एक कार्य है, जिससे वह हमारे सभी पापों को क्षमा करता है, और हमें अपनी दृष्टि में, एकमात्र मसीह की धार्मिकता जो हमें दी गयी है, जिसे हम सिर्फ विश्वास से प्राप्त करते हैं, के कारण धर्मी स्वीकार करता है।

प्रश्न 34 : लेपालकपन क्या है?

उत्तर : लेपालकपन परमेश्वर के मुफ्त अनुग्रह का कार्य है, जिसके द्वारा हम परमेश्वर के पुत्रों की गिनती में स्वीकार किये जाते हैं, और उनके सब अधिकार और सौभाग्य प्राप्त करते हैं।

प्रश्न 35 : पवित्रीकरण क्या है?

उत्तर : पवित्रीकरण परमेश्वर के मुफ्त अनुग्रह का कार्य है, जिसके द्वारा हम अपने पूर्ण मनुष्यत्व में, परमेश्वर के स्वरूप में नये किये जाते हैं, और पाप के लिये अधिक से अधिक मरने और धार्मिकता में जीने के लिये, योग्यता पाते हैं।

प्रश्न 36 : वह कौन से फायदे हैं जो इस जीवन में न्यायीकरण, लेपालकपन और पवित्रीकरण के साथ आते अथवा इनसे निकलते हैं?

उत्तर : वे फायदे जो इस जीवन में न्यायीकरण, लेपालकपन और पवित्रीकरण के साथ आते अथवा इनसे निकलते हैं, वे परमेश्वर के प्रेम का आश्वासन, मन की शान्ति, पवित्र आत्मा में आनन्द, अनुग्रह की बढ़ोत्तरी और उनमें अन्त तक धैर्य से बने रहना है।

प्रश्न 37 : मसीह की मृत्यु से विश्वासियों को क्या फायदे (लाभ) प्राप्त होते हैं?

उत्तर : विश्वासियों की आत्मा, उनकी मृत्यु पर पवित्रता में सिद्ध होती और तुरन्त महिमा में चली जाती है, और उनके शरीर मसीह के साथ संगठित रहकर, पुनरुत्थान के दिन के लिए, उनके कब्र में आराम पाते हैं।

प्रश्न 38 : पुनरुत्थान के समय विश्वासी, मसीह से क्या लाभ प्राप्त करते हैं?

उत्तर : पुनरुत्थान के समय विश्वासी महिमा में जिलाए जाकर, न्याय के दिन खुले आम निर्दोष ठहराकर स्वीकार किये जायेंगे और अनन्तकाल के लिए परमेश्वर के सम्पूर्ण आनन्द में, पूर्णता आशीषित किये जाएंगे।

प्रश्न 39 : वह कौन सा कर्तव्य है जो परमेश्वर मनुष्य से चाहता है?

उत्तर : कर्तव्य जो परमेश्वर मनुष्य से चाहता है, कि वह (मनुष्य) उसकी प्रगट इच्छा के प्रति आज्ञाकारी रहे।

प्रश्न 40 : परमेश्वर ने आज्ञाकारिता के नियम के लिए सबसे पहले क्या प्रगट किया?

उत्तर : परमेश्वर ने मनुष्य की आज्ञाकारिता के लिए, उसको सबसे पहले जो नियम प्रगट किया वह नैतिक व्यवस्था (नियम) था।

प्रश्न 41 : नैतिक व्यवस्था (नियम) संक्षेप में कहाँ समझायी गई है?

उत्तर : नैतिक व्यवस्था (नियम) संक्षेप में दस आज्ञाओं में समझायी गयी है।

प्रश्न 42 : दस आज्ञाओं का सार क्या है?

उत्तर : दस आज्ञा का सार है, कि तू अपने प्रभु परमेश्वर से अपने सम्पूर्ण मन, सम्पूर्ण आत्मा (प्राण), सम्पूर्ण सामर्थ और सम्पूर्ण बुद्धि से प्रेम कर, और अपने पड़ोसी से अपने समान प्रेम कर।

प्रश्न 43 : दस आज्ञाओं की भूमिका (प्रस्तावना) क्या है?

उत्तर : दस आज्ञाओं की भूमिका इन शब्दों में व्यक्त है, ''मैं तेरा परमेश्वर यहोवा हूँ, जो तुझे मिश्र देश अर्थात दासत्व के घर से निकाल लाया हूँ।''

प्रश्न 44 : दस आज्ञाओं की भूमिका हमें क्या सिखाती है?

उत्तर : दस आज्ञाओं की भूमिका हमें सिखाती है, कि यहोवा ही हमारा प्रभु और हमारा परमेश्वर और छुड़ाने वाला है, इसलिए हमें उसकी सारी आज्ञाओं को मानना आवश्यक है।

प्रश्न 45 : पहली आज्ञा कौन सी है?

उत्तर : ''तू मुझे छोड़ दूसरों को ईश्वर करके न मानना'' पहली आज्ञा है।

प्रश्न 46 : पहली आज्ञा में क्या आवश्यक (जरूरी) है?

उत्तर : पहली आज्ञा में आवश्यक है, कि हम परमेश्वर को ही एकमात्र सच्चा परमेश्वर और अपना परमेश्वर मानें और स्वीकार करें और इसके अनुसार ही, उसकी आराधना और महिमा करें।

प्रश्न 47 : पहली आज्ञा में क्या मना किया गया है?

उत्तर : पहली आज्ञा में सच्चे परमेश्वर को अपना परमेश्वर न मानना, न ही उसकी आराधना और महिमा करना, और उसकी आराधना और महिमा किसी अन्य को देना, मना है।

प्रश्न 48 : हमें पहली आज्ञा इन शब्दों अर्थात (मुझे छोड़) में विशेष क्या सिखाया गया है?

उत्तर : ये शब्द ''मुझे छोड़'' पहली आज्ञा में हमें सिखाते हैं, कि परमेश्वर जो सब कुछ देखता है, वह दूसरे ईश्वर को मानने के पाप पर दृष्टि रखता व उससे अप्रसन्न (क्रोधित) होता है।

प्रश्न 49 : दूसरी आज्ञा कौन सी है?

उत्तर : दूसरी आज्ञा यह है कि ''तू अपने लिये कोई मूर्ति गढ़कर न बनाना, अथवा न किसी की प्रतिमा बनाना, जो ऊपर आकाश में या नीचे धरती पर या धरती के नीचे जल में है, न तो तू उनको दण्डवत करना और न ही उनकी उपासना करना, क्योंकि मैं तेरा परमेश्वर यहोवा जलन रखने वाला परमेश्वर हूँ, जो मुझसे बैर करते हैं, उनकी संतान को तीसरी और चौथी पीढ़ी तक बापदाआओं की दुष्टता का दण्ड देता हूँ, जो मुझसे प्रेम रखते हैं और मेरी आज्ञाओं का पालन करते हैं उन हजारों हजार पर करुणा करता हूँ।''

प्रश्न 50 : दूसरी आज्ञा में क्या आवश्यक है?

उत्तर : दूसरी आज्ञा में आवश्यक है, कि सभी धार्मिक आराधना और अधिनियम जैसे परमेश्वर ने अपने वचन में नियुक्त किये हैं, उसी के अनुसार हम उन्हें ग्रहण करें, माने और पवित्र और संपूर्ण रखें।

प्रश्न 51 : दूसरी आज्ञा में क्या मना किया गया है?

उत्तर : दूसरी आज्ञा में मूर्तियों के माध्यम अथवा किसी अन्य प्रकार से, जो उसके वचन के अनुकूल नहीं है, परमेश्वर की आराधना करना मना है।

प्रश्न 52 : दूसरी आज्ञा के साथ कौन से तर्क (उद्देश्य) जुड़े हैं?

उत्तर : दूसरी आज्ञा के साथ जुड़े (उद्देश्य) तर्क है, परमेश्वर की हमारे ऊपर प्रभुता, हममें उसका स्वामित्व और उसकी अपनी आराधना की अभिलाषा है।

प्रश्न 53 : तीसरी आज्ञा कौन सी है?

उत्तर : तीसरी आज्ञा है ''तू अपने परमेश्वर यहोवा का नाम व्यर्थ न लेना क्योंकि जो यहोवा का नाम व्यर्थ लेता है, उसको यहोवा दण्ड दिये बिना नहीं छोड़ेगा।''

प्रश्न 54 : तीसरा आज्ञा में क्या आवश्यक (जरूरी) है?

उत्तर : तीसरी आज्ञा में आवश्यक है, कि परमेश्वर के नाम, शीर्षक, गुण, अनुष्ठान, वचन और कार्यों को पवित्रता और आदर के साथ इस्तेमाल करना चाहिए।

प्रश्न 55 : तीसरी आज्ञा में क्या मना किया गया है?

उत्तर : तीसरी आज्ञा में कुछ भी, जिससे परमेश्वर अपने आप को प्रकट करता है, उसको तुच्छ जानना व उसकी निन्दा करना मना है।

प्रश्न 56 : तीसरी आज्ञा के साथ क्या तर्क (उद्देश्य) जुड़े हैं?

उत्तर : तीसरी आज्ञा के साथ जुड़े तर्क हैं, कि यद्यपि हो सकता है, कि इस आज्ञा को तोड़ने वाले, मनुष्य के दण्ड से बच जाए, परंतु वे प्रभु हमारे परमेश्वर के धर्मी न्याय से कदापि न बच पाएंगे।

प्रश्न 57 : चौथी आज्ञा कौन सी है?

उत्तर : चौथी आज्ञा है ''विश्राम दिन को पवित्र मानने के लिए स्मरण रखना, छः दिन तक तू परिश्रम करके अपना सब काम कर लेना, परंतु सातवा दिन तेरे परमेश्वर यहोवा का विश्राम दिन है, उसमें तू कुछ भी काम न करना, न तो तू, न तेरा पुत्र, न तेरी पुत्री, न तेरा दास, न तेरी दासी, न तेरे पशु, न तेरे साथ ठहरा हुआ कोई परदेशी, क्योंकि यहोवा ने छः दिन में आकाश और पृथ्वी और समुद्र और जो कुछ उनमें हैं, सब को बनाया और सातवे दिन विश्राम किया इसलिये यहोवा ने विश्राम दिन को आशीष दी और उसे पवित्र ठहराया।''

प्रश्न 58 : चौथी आज्ञा में क्या आवश्यक है?

उत्तर : चौथी आज्ञा में परमेश्वर चाहता है, जैसे उसने अपने वचन में नियुक्त किया है, कि निर्धारित समय उसके लिये पवित्र रखें, विशेषकर सप्ताह में एक दिन, जो उसके लिए पवित्र विश्राम दिन ठहरे।

प्रश्न 59 : सात दिनों में से किस दिन को परमेश्वर ने साप्ताहिक विश्राम दिन ठहराया है?

उत्तर : संसार के प्रारंभ से मसीह के पुनरुत्थान तक, परमेश्वर ने सप्ताह के सातवे दिन को साप्ताहिक विश्राम दिन नियुक्त किया था, परंतु मसीह के पुनरुत्थान से निरन्तर संसार के अंत तक, सप्ताह के पहले दिन को मसीही विश्राम दिन नियुक्त किया है।

प्रश्न 60 : विश्राम दिन को कैसे पवित्र रखा जाए?

उत्तर : विश्राम दिन को पूरे दिन पवित्र विश्राम करके, यहाँ तक कि वे सांसारिक और मनोरंजन के कार्य जो अन्य दिनों में उचित है, से विश्राम करते हुए पवित्र रखा जाए, और करुणा और अति आवश्यक कार्यों के समय को छोड़कर, पूर्ण समय सामूहिक और व्यक्तिगत रूप से परमेश्वर की आराधना में लगाते हुए, इसे पवित्र रखा जाए।

प्रश्न 61 : चौथी आज्ञा में क्या मना किया गया है?

उत्तर : चौथी आज्ञा में आवश्यक कर्तव्य को न करना अथवा लापरवाही से करना और आलस्य से, अथवा जो पापमय बातें हैं करके, या हमारे सांसारिक काम और मनोरंजन के विषय में अनावश्यक विचार, शब्द और कामों से उस दिन को अपवित्र करना, मना है।

प्रश्न 62 : चौथी आज्ञा के साथ कौन से तर्क दिये गये हैं?

उत्तर : चौथी आज्ञा के साथ यह तर्क दिये गये हैं, कि परमेश्वर ने सप्ताह के छः दिन हमें हमारे कामों के लिये दिये हैं, परंतु अपने स्वयं के उदाहरण से उसने सातवे दिन विश्राम किया और इसे अपने लिये नियुक्त किया और विश्राम दिन को आशीषित ठहराया।

प्रश्न 63 : पाँचवी आज्ञा कौन सी है?

उत्तर : पाँचवी आज्ञा है ''तू अपने पिता और अपनी माता का आदर करना जिससे जो देश तेरा परमेश्वर यहोवा तूझे देता है, उसमें तू बहुत दिन तक रहने पाए।''

प्रश्न 64 : पाँचवी आज्ञा में क्या आवश्यक है?

उत्तर : पाँचवी आज्ञा में आवश्यक है, कि हम प्रत्येक को उनके पद और सम्बन्ध के अनुसार चाहे वे, हमसे बड़े, छोटे, अथवा हमारे बराबर के हों, हम उनका आदर और उनके प्रति अपने कर्तव्य को पूरा करें।

प्रश्न 65 : पाँचवीं आज्ञा में क्या मना किया गया है?

उत्तर : पाँचवीं आज्ञा में हर एक को, उनके विभिन्न पदों और सम्बन्ध के अनुसार, जो उनके प्रति हमारा आदर और कर्तव्य है, उसे अनदेखा करना अथवा उसके विरुद्ध कुछ करना, मना किया गया है।

प्रश्न 66 : पाँचवीं आज्ञा के साथ जुड़े तर्क (उद्देश्य) क्या है?

उत्तर : पाँचवीं आज्ञा के साथ दिये गये तर्क हैं, कि वे सभी जो इस आज्ञा को (जब तक इससे परमेश्वर की महीमा व उनकी भलाई होती है) पूरा करते हैं, उन्हें लम्बी आयु और सफलता की प्रतीज्ञा की गयी है।

प्रश्न 67 : छठी आज्ञा कौन सी है?

उत्तर : ''तू हत्या न करना'' छठी आज्ञा है।

प्रश्न 68 : छठी आज्ञा में क्या आवश्यक है?

उत्तर : छठी आज्ञा में आवश्यक है, कि हम, अपने जीवन और दूसरों के जीवन की सुरक्षा के लिये, यथासम्भव उचित प्रयास करते रहें।

प्रश्न 69 : छठी आज्ञा में क्या मना किया गया है?

उत्तर : छठी आज्ञा में, अनुचित रीति से अथवा अन्य किसी भी प्रकार से, अपने प्राण देना अथवा अपने पड़ोसी की हत्या करना मना है।

प्रश्न 70 : सातवीं आज्ञा कौन सी है?

उत्तर : ''तू व्यभिचार न करना'' सातवीं आज्ञा है।

प्रश्न 71 : सातवी आज्ञा में क्या आवश्यक है?

उत्तर : सातवी आज्ञा में आवश्यक है, कि हम अपनी स्वयं और अपने पड़ोसी की

पवित्रता हृदय, बातचीत और व्यवहार में सुरक्षित बनाये रखें।

प्रश्न 72 : सातवीं आज्ञा में क्या मना किया गया है?

उत्तर : सातवीं आज्ञा में सभी अशुद्ध (कामुक) विचार, बातें और कार्य करना मना है।

प्रश्न 73 : आठवीं आज्ञा कौन सी है?

उत्तर : ''तू चोरी न करना'' आठवीं आज्ञा है।

प्रश्न 74 : आठवीं आज्ञा में क्या आवश्यक है?

उत्तर : आठवीं आज्ञा में आवश्यक है, कि हम अपने और दूसरों के लिए ,उचित रीति से धन प्राप्त करें और इसे बढ़ाएं।

प्रश्न 75 : आठवीं आज्ञा में क्या मना किया गया है?

उत्तर : आठवीं आज्ञा में ऐसी कोई भी बात, जो हमारी स्वयं की अथवा पड़ोसी के धन व बाहरी स्थिति को अनुचित रीति से बाधित करती अथवा नुकसान पहुँचाती है, करना मना है।

प्रश्न 76 : नौवीं आज्ञा कौन सी है?

उत्तर : नौवीं आज्ञा है ''तू अपने पड़ोसी के विरुद्ध झूठी साक्षी न देना।''

प्रश्न 77 : नौवीं आज्ञा में क्या आवश्यक है?

उत्तर : नौवीं आज्ञा में आवश्यक है, कि मनुष्यों के बीच में, सत्य बना और बढ़ता रहे और हमारा स्वयं का और पड़ोसी का अच्छा नाम बना रहे, विशेषकर साक्षी देने के विषय में।

प्रश्न 78 : नौवीं आज्ञा में क्या मना किया गया है?

उत्तर : नौवी आज्ञा में कुछ भी, जो सत्य के लिए और हमारे स्वयं अथवा हमारे पड़ोसी के अच्छे नाम के लिए, हानिकारक अथवा घातक है, करना मना है।

प्रश्न 79 : दसवीं आज्ञा कौन सी है?

उत्तर : दसवीं आज्ञा है कि ''तू अपने पड़ोसी के घर का लालच न करना, तू न तो अपने पड़ोसी की पत्नी, न उसके दास, न उसकी दासी, न उसके बैल, न उसके गधे, न अपने पड़ोसी की किसी वस्तु का लालच करना।''

प्रश्न 80 : दसवीं आज्ञा में क्या आवश्यक है?

उत्तर : दसवीं आज्ञा में आवश्यक है, कि हम अपनी स्वयं की स्थिति से पूर्ण संतुष्ट हों और अपने पड़ोसी और वह सब जो उसका है, के प्रति सही और उदार व्यवहार रखें।

प्रश्न 81 : दसवीं आज्ञा में क्या मना किया गया है?

उत्तर : दसवीं आज्ञा में अपनी अवस्था से असंतुष्ट होना, अपने पड़ोसी की सम्पत्ति से जलन अथवा घृणा करना और अन्य कुछ भी जो उसका है, उससे अनुचित लगाव व चाहत रखना मना है।

प्रश्न 82 : क्या कोई मनुष्य इस योग्य है, कि वह पूर्णता परमेश्वर की आज्ञाओं को पूरा कर सके?

उत्तर : पतन के बाद कोई भी मनुष्य इस जीवन में इस योग्य नहीं है, कि पूर्णता परमेश्वर की आज्ञाओं को पूरा कर सके, वरन वह प्रतिदिन विचार, बातों और कार्यों में इनका उल्लंघन करता है।

प्रश्न 83 : क्या व्यवस्था के सभी उल्लंघन एक समान घृणित हैं?

उत्तर : कुछ पाप अपने आप में, अनेक उग्रता होने के कारण, अन्य पापों की अपेक्षा परमेश्वर की दृष्टि में अधिक घृणित है।

प्रश्न 84 : प्रत्येक पाप का प्रतिफल क्या है?

उत्तर : प्रत्येक पाप का प्रतिफल, इस जीवन और आने वाले जीवन में, परमेश्वर का क्रोध और श्राप है।

प्रश्न 85 : परमेश्वर हमसे क्या चाहता है कि हम पाप के कारण आयें उसके क्रोध व श्राप से बच सकें?

उत्तर : पाप के कारण आये उसके क्रोध व श्राप से बचने के लिए, परमेश्वर चाहता है कि हम यीशु पर विश्वास, जीवन के लिए पापों से पश्चाताप करें और उन सभी साधनों का जिनसे मसीह हमें उद्धार का लाभ पहुँचाता है, उचित इस्तेमाल करें।

प्रश्न 86 : यीशु मसीह में विश्वास क्या है?

उत्तर : यीशु मसीह में विश्वास, उद्धार का अनुग्रह है, जिसके द्वारा हम उसे स्वीकार और उद्धार के लिए सिर्फ उस पर भरोसा करते हैं, जैसा कि सुसमाचार में वह हमारे लिये दिया गया है।

प्रश्न 87 : जीवन के लिए पश्चाताप क्या है?

उत्तर : जीवन के लिए पश्चाताप उद्धार का अनुग्रह है, जिसके द्वारा एक पापी, अपने पापों की सच्चाई जानकर और मसीह में परमेश्वर की करुणा समझकर, अपने पाप से दु:ख और नफरत करते हुए, इससे परमेश्वर की ओर मुड़ता है, तथा दृढ़ता और पूर्ण उद्देश्य के साथ, नई आज्ञा पालन करने का प्रयास करता है।

प्रश्न 88 : वे बाहरी और साधारण साधन कौन से हैं, जिनके द्वारा मसीह हमें छुटकारे के

लाभ प्रदान करता है?

उत्तर : बाहरी और साधारण साधन, जिनसे मसीह हमें छुटकारे का लाभ प्रदान करता है, वे उसके अधिनियम/अनुष्ठान, वचन, संस्कार और प्रार्थना है। ये सभी उद्धार के लिए चुने हुओं में, प्रभावी किये जाते हैं।

प्रश्न 89 : किस प्रकार वचन उद्धार के लिये प्रभावी होता है?

उत्तर : परमेश्वर का आत्मा वचन पढ़ता है, परंतु विशेषकर वचन का प्रचार, पापी को कायल करने व बदलने में और विश्वास से उद्धार के लिए, उन्हें पवित्रता और तसल्ली में बढ़ाने के लिये, प्रभावी होता है।

प्रश्न 90 : परमेश्वर के वचन को कैसे पढ़ा और सुना जाना चाहिए, कि यह उद्धार के लिए प्रभावी बन जाए?

उत्तर : वचन उद्धार के लिए प्रभावी हो, इसके लिये हमें उसे सावधानी, तैयारी और प्रार्थना के साथ सुनना, पढ़ना चाहिए, विश्वास और प्रेम से, अपने हृदय में ग्रहण और अपने जीवन में इसका इस्तेमाल करना चाहिए।

प्रश्न 91 : किस प्रकार संस्कार उद्धार के लिये प्रभावी माध्यम बनते हैं।

उत्तर : संस्कार उद्धार के लिए प्रभावी साधन बनते हैं, इसलिए नहीं कि उनमें कोई गुण है अथवा उसमें जो इसका प्रबन्धन करता है, परंतु सिर्फ मसीह की आशीष द्वारा और पवित्र आत्मा के उनमें कार्य करने से, जो इसे विश्वास के साथ स्वीकार करते हैं।

प्रश्न 92 : संस्कार क्या है?

उत्तर : संस्कार, मसीह द्वारा नियुक्त किया गया एक पवित्र अनुष्ठान अर्थात रीतियां है, जिसमें परिचित चिन्हों द्वारा, विश्वासियों को मसीह और नयी वाचा के लाभ प्रस्तुत व प्रमाणित होते और विश्वासियों में लागू होते हैं।

प्रश्न 93 : नये नियम के संस्कार कौन से हैं?

उत्तर : नये नियम के संस्कार बपतिस्मा और प्रभु भोज है।

प्रश्न 94 : बपतिस्मा क्या है?

उत्तर : बपतिसमा एक संस्कार है, जिसमें पिता और पुत्र और पवित्र आत्मा के नाम से जल संस्कार दिया/लिया जाता है, जो हमारा मसीह में एक होने, अनुग्रह की वाचा के फायदों में सम्मिलित होने और हम परमेश्वर में बने रहेंगे, इस बात का चिन्ह और प्रमाण है।

प्रश्न 95 : किन लोगों को बपतिस्मा देना उचित है?

उत्तर : जो लोग सदृश्य कलीसिया से बाहर हैं। जब तक वे मसीह में अपना विश्वास और उसकी आज्ञाओं पर चलना स्वीकार नहीं करते, उन्हें बपतिस्मा नहीं देना

चाहिए। लेकिन जो सदृश कलीसिया के सदस्य हैं, उनके बच्चों को बपतिस्मा देना चाहिए।

प्रश्न 96 : प्रभु भोज क्या है?

उत्तर : प्रभु भोज एक संस्कार है, जिसमें मसीह के नियुक्त किये अनुसार, रोटी और दाखरस लेने और देने से, हम उसकी मृत्यु को प्रगट करते हैं। जो लोग इसे उचित रीति से लेते हैं, वे शारीरिक और सांसारिक रीति से नहीं, परंतु विश्वास से मसीह के शरीर और लहू में, उसके सभी फायदों के साथ, अपने आत्मिक पोषण और अनुग्रह में बढ़ोत्तरी के लिए शामिल होते हैं।

प्रश्न 97 : प्रभु भोज को उचित रीति से लने के लिये क्या आवश्यक है?

उत्तर : वे जो प्रभु भोज में उचित रीति से शामिल होना चाहते हैं, उनके लिए आवश्यक है, कि वे प्रभु के शरीर को समझने के लिए, अपने आप अपने ज्ञान, उसमें से खाने के अपने विश्वास, अपने पश्चाताप, प्रेम और अपनी नयी आज्ञाकारिता की जांच करें। कहीं ऐसा न हो कि अनुचित रीति से खाने और पीने से, वे अपने ऊपर दण्ड ले आए।

प्रश्न 98 : प्रार्थना क्या है?

उत्तर : प्रार्थना हमारी इच्छाओं को, जो परमेश्वर की इच्छा के अनुरूप है, उन्हें मसीह के नाम से, अपने पापों को मानते हुए और उसकी करुणा का धन्यवाद करते हुए, परमेश्वर के सम्मुख प्रस्तुत करना है।

प्रश्न 99 : प्रार्थना में हमारी अगुवाई करने के लिए परमेश्वर ने क्या नियम दिया है?

उत्तर : परमेश्वर का पूरा वचन प्रार्थना करने में हमारी मदद करता है। परंतु अगुआई का विशेष नियम, मसीह द्वारा उसके चेलों को सिखाई गई प्रार्थना है, जिसे हम प्रभु की प्रार्थना कहते हैं।

प्रश्न 100 : प्रभु की प्रार्थना की प्रस्तावना हमें क्या सिखाती है?

उत्तर : प्रभु की प्रार्थना की प्रस्तावना जो ''हे हमारें पिता तू जो स्वर्ग में है'' हमें यह सिखाती है, कि हम पूर्ण, पवित्र आदर व विश्वास के साथ परमेश्वर के नजदीक जाएं, जैसे बच्चा पिता के पास जाता है, क्योंकि वह हमारी सहायता के लिये योग्य हैं, और इसके लिए तैयार रहता हैं अतः हमें दूसरों के साथ और दूसरों के लिए प्रार्थना करनी चाहिए।

प्रश्न 101 : हम पहली विनती में क्या प्रार्थना करते हैं?

उत्तर : पहली विनती जो 'तेरा नाम पवित्र माना जाए' है हम प्रार्थना करते हैं, कि परमेश्वर हमें और दूसरों को इस योग्य बनाए, कि सभी बातों में, जिसके द्वारा वह अपने आपको प्रगट करता है, हम उसकी महिमा करें और वह सभी बातों

को अपनी महिमा के लिए इस्तेमाल (व्यवस्थित) करें।

प्रश्न 102 : दूसरी विनती में हम क्या प्रार्थना करते हैं?

उत्तर : दूसरी विनती जो 'तेरा राज्य आए' है हम प्रार्थना करते हैं, कि शैतान का राज्य नाश किया जाए और अनुग्रह का राज्य स्थापित हो, हम और दूसरे लोग इसमें लाए और रखे जाएं और महिमा का राज्य शीघ्र आए।

प्रश्न 103 : तीसरी विनती में हम क्या प्रार्थना करते हैं?

उत्तर : तीसरी विनती जो यह है कि ''तेरी इच्छा जैसे स्वर्ग में पूरी होती है वैसे ही पृथ्वी पर भी पूरी हो'' हम प्रार्थना करते हैं, कि परमेश्वर अपने अनुग्रह से हमें ऐसी योग्यता और इच्छा दें, कि हम उसे जान सकें, उसकी आज्ञा मानें और सभी बातों में उसके आधीन रहें, जैसा कि स्वर्ग में स्वर्गदूत करते हैं।

प्रश्न 104 : हम चौथी विनती में क्या प्रार्थना करते हैं?

उत्तर : चौथी विनती जो इस प्रकार है ''हमारी दिन भर की रोटी आज हमें दे'' हम प्रार्थना करते हैं, कि परमेश्वर के मुफ्त दान से अच्छी वस्तुओं का पर्याप्त हिस्सा इस जीवन में प्राप्त करें, और उनमें उसकीआशीषों का आनन्द मनाएं।

प्रश्न 105 : हम पाँचवीं विनती में क्या प्रार्थना करते हैं?

उत्तर : पाँचवीं विनती जो इस प्रकार है, ''जैसे हमने अपने अपराधियों को क्षमा किया है वैसे ही तू भी हमारे अपराधों को क्षमा कर'', हम प्रार्थना करते हैं, कि परमेश्वर मसीह के लिये हमारे सब पापों को क्षमा कर, हम ऐसा साहस इसलिए करते हैं, क्योंकि उसके अनुग्रह से हम इस योग्य हुए हैं, कि हृदय से हमने दूसरों को क्षमा किया है।

प्रश्न 106 : हम छठी विनती में क्या प्रार्थना करते हैं?

उत्तर : छठी विनती जो यह है कि ''और हमें परीक्षा में न ला परंतु बुराई से बचा'' हम प्रार्थना करते हैं, कि परमेश्वर, तू हमें पाप में पड़ने की परीक्षा से बचा अन्यथा जब हमारी परीक्षा होती है, तो हमारी मदद कर और हमें इससे बचा।

प्रश्न 107 : हम प्रभु की प्रार्थना के निष्कर्ष से क्या सीखते हैं?

उत्तर : प्रभु का प्रार्थना का निष्कर्ष जो यह है कि ''क्योंकि राज्य और पराक्रम और महिमा सदा तेरे ही हैं। आमीन'' हमें सिखाता है, कि हम प्रार्थना में अपना उत्साहन सिर्फ परमेश्वर से लें, और प्रार्थना राज्य, पराक्रम और महिमा उसे देते हुए उसकी स्तुति करें और हमारी इच्छा की साक्षी और प्रार्थना सुनने की निश्चयता में हम यह कहें-आमीन अर्थात ऐसा ही हो।

●